चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र





ब्रह्मदत्त जब काशी का राजा था, तब बोधिसत्व एक ब्राह्मण के लड़के के रूप में पैदा हुए। वे बौने थे, इसलिए उन्हें लोग 'बदशकल' कहकर पुकारते थे। पर उन्हें इसकी कुछ भी परवाह न थी। छुटपन में ही तक्षशिला जाकर उन्होंने धनुर्विद्या सीखकर काफी ख्याति पाई थी।

उस बदशकल को धनुर्विद्या द्वारा रोजी बनाने की सूझी। वह घूमते-घामते कितने ही देश गया, कितने ही राजाओं से मिला। उसने उनसे कहा कि वह धनुर्विद्या-प्रवीण था। उनसे नौकरी माँगी। पर चूँकि वह बौना था, इसलिए किसी ने भी उसको नौकरी न दी। वह मन मसोसकर रह गया।

नौकरी पाने के लिए क्या करना होगा? उसे पता न लगा। वह यह भी न जान सका कि उसको अपनी विद्या का किस प्रकार उपयोग करना होगा? एक दिन एक गाँव में वह जुलाहों की गली में से जा रहा था। उसे एक हट्टकट्टा आदमी करघे पर काम करता दिखाई दिया। बदशकल ने उसके पास जाकर पूछा-"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम भीमसेन है।" जुलाहे ने कहा।

"इतने लम्बे-चौड़े हो! इतना बड़ा-चढ़ा नाम है और करते जुलाहे का काम हो? क्या बात है? मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है। बोलो भाई।" बदशकल ने उससे पूछा।

"मैं क्या करूँ? सिवाय कपड़े बुनने के मुझे और कोई काम नहीं आता।" भीमसेन ने कहा।

"अगर ऐसी बात है तो मैं तुम्हें एक ऐसा तरीका बताऊँगा, जिससे तुम

खूब कमा सकोगे, मेरे साथ आओगे?" बदशकल ने पूछा।

भीमसेन खुशी खुशी बदशकल के साथ गया। दोनों मिलकर एक दिन में काशी पहुँचे।

"तुम राजा के पास जाकर यह कह देना कि तुम धनुर्विद्या में प्रवीण हो। उनसे नौकरी माँगो। तुम्हारी लम्बाई-चौड़ाई देखकर वे बहुत प्रभावित होगे और ज़रूर तुम्हें नौकरी देंगे।" बदशकल ने भीम-सेन से कहा।

"पर मुझे तो धनुर्विद्या नहीं आती है।" भीमसेन ने कहा।

"अगर नहीं आती है तो कोई बात नहीं है। मैं खूब जानता हूँ। तुम मुझे अपने साथ रखो और जब कभी ज़रूरत होगी, मैं तुम्हारी मदद करता रहूँगा। तुम निश्चिन्त रहो।" बदशकल ने उसे उत्साह दिलाते हुए कहा।

भीमसेन ने राजा के पास जाकर कहा कि यह धनुर्विद्या में बड़ा प्रवीण था। राजा को बड़ी प्रसन्नता हुई और वहाँ उसको आसानी से नौकरी मिल गई। उसका वेतन एक हजार रुपया



था। बदशकल उसका योद्धा हो गया। दोनों एक जगह रहकर आराम से दिन गुज़ारने लगे। इस बीच, काशी की प्रजा पर एक बिपत्ति आ पड़ी। काशी राज्य के पासवाले अरण्य में, एक शेर, आते-जाते राहगीरों को मारने लगा। यह पता लगते ही राजा ने भीमसेन को बुलवाया और उसे आज्ञा दी कि वह जाकर शेर को मारे और राहगीरों की प्राण-रक्षा करे।

भीमसेन राजा से विदा लेकर, बदशकल के पास आया। उसने पूछा-"अब मुझ पर आफत आ पड़ी है। मैं उस शेर को

कैसे मार सकता हूँ? इस आफत से कैसे बचूँ?"

"जो मैं कहूँ करो। तुम शेर को अकेला नहीं मार सकते। शहर से बाहर जाते ही दो हजार गाँववालों को इकट्ठा करो। शेर की जगह जाओ। शेर का गर्जन सुनते ही तुम कहीं किसी पेड़ के पीछे छुप जाओ। तुम्हारे साथ आये हुए लोग, शेर को मार देंगे। शेर के मरने तक छुपे रहो, फिर एक बेल को तोड़कर सामने आ जाओ। शेर को मरा देखकर यो गुस्सा दिखाओ-'इस बेल से इसको पकड़कर में राजा के सामने अपना चातुर्य दिखाना चाहता था। उसे मारना ही था तो तुम सब की क्या जरूरत थी? क्या में काफी नहीं हूँ? कहो किसने इस शेर को मारा है? मैं उसका गला कटवा लूँगा।' इस तरह चिल्लाओ। लोग डर जायेंगे और कोई नहीं बतायेगा कि शेर किसने मारा है। तब तुम राजा के पास जाकर कहना कि शेर तुमने ही मारा है। तुम्हारी बात का विरोध करने का किसी में साहस न होगा।" बदशकल ने उसे समझा-बुझाकर सलाह दी।



भीमसेन ने ठीक वही किया जो बदशकल ने बताया था। जब गाँववाले शेर मार रहे थे, तो भीमसेन कहीं पेड़ों के पीछे खिसक गया। उसके मरने के बाद, एक बेल हाथ में लेकर बाहर आया और गाँव वालों को डाँटने-डपटने लगा। उसने कहा-"जिस किसी ने शेर को मारा है, उसका सिर धड़ से उड़ा दिया जायेगा।" गाँववाले डर गये और अपने अपने रास्ते चले गये। यह मौका देखकर भीमसेन वापिस शहर गया, और राजा से उसने बड़ा रौब दिखाते हुए कहा-"महाराज! मैने शेर को मार दिया है। अब प्रजा को किसी प्रकार का भय नहीं है। वे बेफ्रिक होकर उधर से आ-जा सकते हैं।"

राजा, भीमसेन का पराक्रम देखकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ। भीमसेन की ख्याति दुगुनी हो गई। सब कोई उसी की तारीफ करता। प्रशंसा पाकर भीमसेन सोचने लगा कि सचमुच वह बहुत बड़ा पराक्रमशाली है और बदशकल को वह नीची नज़र से देखने लगा। बदशकल भी यह देख सब बातें समझ गया। पर उसने उसकी ख़ास परवाह न की। सब सहता रहा।



कुछ दिनों बाद शत्रु राजा ने आकर काशी राज्य को घेर लिया। उसने राजा के पास ख़बर भिजवाई-"हार मानते हो या तुम पर हमला करूँ?" राजा ने भीमसेन को बुलाकर आज्ञा दी-"जल्दी सैनिकों को लेकर जाओ और शत्रुओं को परास्त करो।" उसे कवच पहना कर धनुष-बाण देकर, हाथी पर चढ़ाकर युद्ध स्थल को भेजा।

बदशकल यह बात अच्छी तरह जानता था कि भीमसेन ख़तरे में पड़नेवाला है। वह भी धनुष-बाण लेकर भीमसेन के पीछे हाथी पर जा बैठा। चारों ओर घुड़सवार और पदाती चल रहे थे। वे शीघ्र ही युद्ध-भूमि में पहुँच गये।

शत्रु सेना को सामने तैयार खड़ा देख भीमसेन पसीना-पसीना हो गया। हाथ पैर ठण्डे पड़ गये। दिल की धड़कन तेज़ हो गई। उसने हाथी पर से खिसककर मरना चाहा। अगर ठीक वक्त पर बदशकल उसको हाथी पर न बाँध देता, तो नीचे गिरने पर वह घोड़ों द्वारा कुचल दिया जाता।

तब बदशकल ने नेतृत्व स्वयं अपने हाथ में लिया। वह हाथी पर तूफ़ान की तरह शत्रुओं के बीच गया। उन पर बाण वर्षा करता, शत्रु राजा के पास पहुँचा। थोड़ी देर में शत्रु राजा घायल हो गया। हार गया और वह बदशकल का कैदी भी हो गया।

बदशकल के युद्ध भूमि से वापिस जाने के बाद राजा को मालूम हुआ कि सचमुच कौन धनुर्विद्या में प्रवीण था। उसने बदशकल को अपनी सेना का सेनापति नियुक्त किया। बदशकल ने भीमसेन को अनेक भेंट उपहार देकर विदा किया।

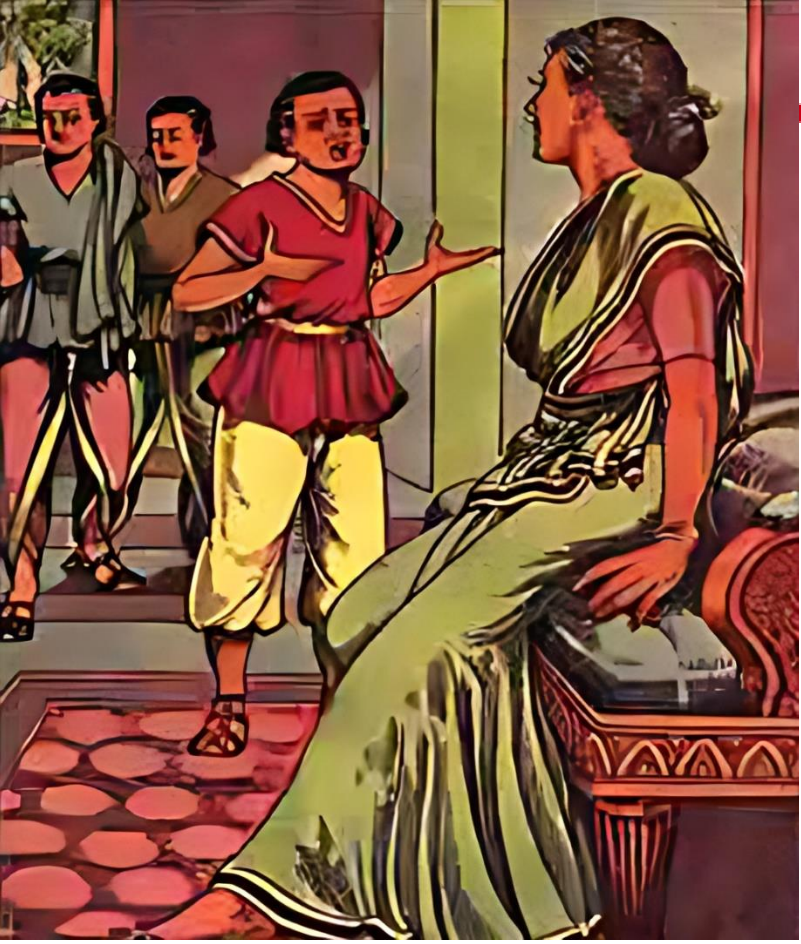




अवन्ती नगर में एक बूढ़ा व्यापारी रहा करता था। जवानी में ही वह कई देश विदेश गया और जहाज़ों के व्यापार में उसे काफी फायदा भी हुआ। उम्र बढ़ती गई। उसने अपना व्यापार अपने लड़कों को सौंपने की कोशिश की। परन्तु उसके तीन लड़कों में बड़े दो लड़के जीवदत्त और लक्षदत्त निकम्मे थे। उनमें इतने ऐब आ गये थे कि घर भी मुश्किल से आते थे। तीसरे लड़के पिङ्गल की अभी बीस वर्ष की भी उम्र न हुई थी।

इसी चिन्ता में बूढ़ा व्यागरी कई दिनों चारपाई पकड़े रहा। आखिर मरते समय उसने अपनी सम्पत्ति तीनों लड़कों और पत्नी में समान रूप से बाँट दी। पिता के मर जाने के बाद जीवदत्त और लक्षदत्त अपनी सम्पत्ति बिना आगे-पीछे देखे खर्चने लगे। माँ भी दोनों लड़कों को फिजूल खर्च देख, अपनी सम्पत्ति को लेकर छोटे लड़के पिङ्गल के यहाँ रहने चली गई।

जीवदत्त और लक्षदत्त का जब पैसा ख़तम हो गया तो माँ को ढूँढते ढूँढ़ते वे पिङ्गल के घर पहुँचे। पिङ्गल अपने भाइयों को देखकर बहुत खुश हुआ और उसने उन्हें आदरपूर्वक निमन्त्रित किया। पर उन्होंने उसका निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया। माँ को उन्होंने अपने घर आकर रहने के लिए बहुत आग्रह किया।



माँ ताड़ गई कि वे क्यों उसे अपने घर बुला रहे थे। क्योंकि दोनों लड़कों को उसके प्रति कोई आदर न था। पति के दिये हुए धन को हड़पने के लिए ही वे प्रेम का दिखावा कर रहे थे। इसलिए उसने इधर उधर की बातें करके अपने लड़कों से कहा-"तुम दोनों बड़े हो। अपने पाँवों पर खड़े हो सकते हो। अच्छाई बुराई समझ सकते हो। पिङ्गल अभी छोटा है। बचपन है। इसलिए मेरा उसके पास रहना ही अच्छा है।"

बड़े लड़के अपनी माँ पर गरज पड़े- "अच्छा, तू उसी के पास रह। हमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु पिना जी जो तुझे सम्पत्ति दे गये हैं, उसमें से हमारा हिस्सा हमें दे दो। वरना हम यहाँ से नहीं हटेंगे।"

"मेरे जीते जी, तुम उसमें से कैसे हिस्सा ले सकते हो?" माँ ने पूछा।

"अगर आज हमारा हिस्सा न मिला, तो बाद में मिलेगा, इसका क्या भरोसा है? अगर पिङ्गल ने वह सम्पति हड़प ली और तुझे चकमा दिया तो हमारा क्या होगा? अभी फैसला हो जाना चाहिए।" बड़े लड़कों ने कहा।

भाइयों का इस प्रकार कड़ना पिङ्गल को बहुत बुरा लगा। उसने माँ के पास जाकर कहा-"माँ! अगर तू चाहती है तो भाइयों के पास ही जाकर रह। तेरी सम्पत्ति में से मुझे एक दमड़ी भी नहीं चाहिये।"

माँ यह न मानी। दोनों लड़कों को बड़ा गुम्सा आया। उन्होंने माँ को लाठियों से मारना शुरू किया। पिङ्गल को अपने भाइयों के इस कार्य पर बहुत दुख हुआ। उसने उन्हें रोका। इस पर वे और भी बिगड़े। उसे भी बुरी तरह मारा-पीटा।

माँ जैसे तैसे घर से बाहर जाकर, आस पास के घर के लोगों को बुला लाई। उन्होने बड़े लड़के को खूब लताड़ा। दोनो भाइयों ने बाहर जाते कहा-"हम कोई बेवकूफ नहीं हैं। दुनिया देखी है। तुम दोनों को अदालत में घसीटेंगे। देखें, कहाँ जाती है जायदाद!"

उन्होने ठीक वही किया, जिसकी उन्होंने धमकी दी थी। उन्होंने अदालत में माँ और छोटे भाई के विरुद्ध दावा दायर कर दिया। माँ और पिङ्गल को अदालत से बुलावा आया। विवश होकर वे दोनो अदालत में गये। क्योंकि न्यायाधिकारी ने दोनों बड़े भाइयों से रिश्वत ले रखी थी, इसलिए उसने, पिङ्गल और माँ के विरुद्ध फैसला दिया।

पिङ्गल ने इस अन्याय पर अपील की। वह एक महीने लगातार अदालत आता जाता रहा। आखिर उसके अनुकूल फैसला हुआ। यद्यपि फैसला उनके अनुकूल हुआ था, तो भी इधर उधर के समझौते में, वकीलों की फीस देने में, अदालत के खर्च में, पिङ्गल और माँ की जायदाद ख़तम हो गई।



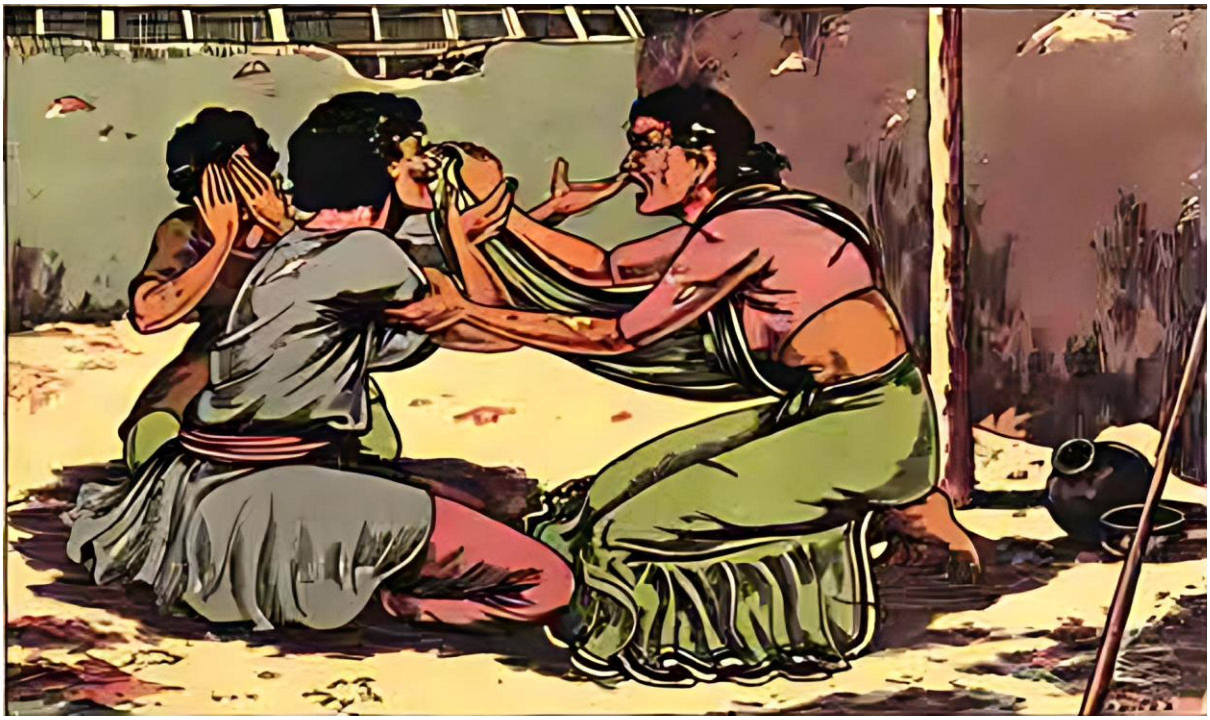
जीवदत्त और लक्षदत्त का भी पैसा बहुत खर्च हुआ और वे गरीब हो गये। आय का उन दोनों के लिए कोई रास्ता न था, इसलिये वे गलियों में घूम-फिर कर भीख माँगने लगे।

पिङ्गल को अपने दुर्भाग्य पर चिन्ता न थी। उसने माँ को भी ढाढस बँधाया। एक जाल लेकर वह नदी में मछली पकड़ने चला गया। यद्यपि उसे मछली पकड़नी न आती थी, तो भी नदी में से वह काफी मछली पकड़ लाया। उसने उन्हें बाज़ार में बेचा और उस पैसे से दुकान से खाने-पीने की चीजें ले आया।

इस तरह पिङ्गल सवेरे से शाम तक मछलियाँ पकड़ता और उन्हें बाज़ार में बेचकर जो पैसा मिलता उससे गुजारा करता। एक तरह से दोनों सुखी थे। थोड़े दिनों में यह बात भाइयों को भी मालूम हो गई। जब वह मछली पकड़ने गया हुआ था तो वे उसके घर पहुँचे और माँ के सामने जाकर कहने लगे कि भूख लग रही है। यद्यपि उन दोनों ने उसको बहुत तङ्ग किया था, तो भी मातृ-हृदय था। वह सब भूलकर उसने उनको भोजन दिया।

जीवदत्त और लक्षदत्त ने कृतज्ञता प्रकट की। और उसके सामने पिछले बुरे कार्यों के लिए पश्चाताप प्रकट किया। माँ को भी उन पर दया आई। उसने उनसे कहा कि मछलियाँ पकड़ने के लिए भाई के चले जाने के बाद, वे रोज आकर भोजन कर जाया करें। कभी काम करने की आदत न थी, इसलिए उन दोनों आलसी भाइयों को, अपनी माँ की बात पर बहुत खुशी हुई और गली में चले गये।

पिङ्गल यह कुछ न जानता था, जाल लेकर नदी चला जाता।



एक दिन वह बहुत देर तक जाल फेंकता रहा, पर एक मछली भी न फसी। वह सूर्यास्त तक प्रयत्न करता रहा, पर भाग्य ने उसका साथ न दिया। आखिर वह जाल कन्धे पर डाल, उदास हो घर की ओर चला। रास्ते में वह दुकान थी, जहाँ वह रोज़ घर के लिए खाने-पीने की चीज़े खरीदता था। वह वहाँ न गया। उसको जाता देख, दुकानदार ने उसे आवाज़ लगाई।

पिङ्गल ने दुकानदार के पास जाकर कहा कि एक भी मछली न फँसी थी, इसलिए उसके पास कुछ भी खरीदने के लिए पैसे न थे। यह सुन दुकानदार ने हँसकर कहा-"तुम रोज जरूरी चीजें यहीं से खरीदकर ले जाते हो न? इसलिए आज अगर पैसे नहीं है तो क्या हो गया? चीजें ले जाओ। कल पैसा दे देना।"

पिङ्गल ने दुकानदार को धन्यवाद दिया और आवश्यक चीजें लेकर रोज के समय से पहले ही वह घर चला गया। उस समय उसके दोनों भाई अन्दर भोजन करते माँ से बातें कर रहे थे। अकस्मात् पिङ्गल को आया देखकर उन दोनों भाइयों ने घर से बाहर भागने की सोची।



पिङ्गल ने दोनों भाइयों को देखते ही गले लगाया और कहा-"भाइयो! जो मेरे पास है, आराम से खाओ। जो हो गया सो हो गया। हम सब एक ही पिता की तो सन्तान हैं।"

छोटे भाई के यह कहते ही बड़े भाई बड़े खुश हुए। उन्होंने कहा-"हमें नही मालूम था कि तुम इतने अच्छे हो। मालूम होता तो फिजूल हम तुम पर दावा न करते, न तुम्हें बरबाद करते, न खुद ही बरबाद होते।"

माँ भी तीनों भाइयों को यों अकस्मात आपस में मिलते देख, बड़ी प्रसन्न हुई।

पिङ्गल, अगले दिन भी यथा समय नदी गया। उस रोज़ भी उसने बड़ी मेहनत की पर जाल में एक भी मछली न आई। वह अपनी किस्मत पर रोता घर जा रहा था कि दुकानवाले ने उसे फिर बुलाया, और उसकी हालत देख फिर चीजें उसको उधार दीं। पिङ्गल कल का भरोसा करके चीजें लेकर घर गया।

पर दूसरे दिन भी उसे निराश ही होना पड़ा। इस तरह, लगातार, दस दिन उसे कोई मछली न मिली। पिङ्गल ग्यारहवें दिन अपनी पुरानी जगह छोड़कर तोता



झील मछलियाँ पकड़ने गया। वह वहाँ से दो मील के करीब थी।

झील में जाल फेंककर वह किनारे पर बैठा ही था कि दूर मैदान में धूल उड़ी। कोई घुड़सवार आता लगता था। पिङ्गल अभी सोच रहा था कि वह घुड़सवार कौन हो सकता है, इतने में वह तेजी से सीधे पिङ्गल के पास चला आया। उसने घोड़े पर से उतरते हुए कहा-"देखो, पिङ्गल! तुम्हें मेरी एक मदद करनी होगी। कहो।"

वह आदमी पिङ्गल के लिए बिल्कुल अजनवी था। पर उसको नाम से पुकारता देख उसे आश्चर्य हुआ। उसने अजनवी की ओर देखकर सविनय पूछा-"आप मेरा नाम कैसे जानते हैं? आप क्या सहायता चाहते हैं?"

अजनवी यह सुनकर हँसा। उसने कहा-"तुम्हारा नाम क्या है? तुम कब इस झील में मछलियाँ पकड़ोगे.... वह सब हमारे गुरु ने तुम्हारे पैदा होने के पहले ही बता दिया था। यह चालीस साल पहले की बात है। खैर, वह बात अब छोड़ो। मेरी मदद कर सकोगे?"



"कहिये भी! मैं आपकी मदद करने को तैयार हूँ; पर अभी आपने अपना नाम नहीं बताया?" पिङ्गल ने कहा।

मेरा नाम मण्डन है। जो मैं तुम्हें करने लिए कह रहा हूँ, वह कोई कठिन काम नहीं है। मेरे हाथ बाँधकर मुझे झील में फेंक दो। थोड़ी देर बाद जब मेरा सिर ऊपर दिखाई दे तब मुझे जाल डालकर खींच लेना। अगर पैर दिखाई दें तो फौरन इस घोड़े को ले जाकर शहर में, काञ्चन मिश्र नाम के एक व्यापारी को सौंप देना। वह इससे बहुत खुश होकर तुम्हें इसके बदले में सौ मुहरें देगा।

पिङ्गल एक मिनट तक सोचता रहा। फिर वह यह करने के लिए मान गया। मण्डन ने घोड़े की ज़ीन में से लटकती हुई रस्सी को लाकर पिङ्गल के हाथ में रखा। उससे उसने मण्डन के हाथ पीछे बाँध दिये, जैसा कि उसने कहा था। फिर उसको कन्धे पर डालकर वह किनारे के टीले पर गया। वहाँ खड़े होकर, एक दो क्षण के लिए वह कुछ सोचता रहा और सोचते सोचते उसे झील में फेंक दिया।

दो तीन मिनट तालाब में तरङ्गें आती रहीं। फिर मण्डन के पैर ऊपर तैर आये। "बेचारा मर गया।" पिङ्गल उसका घोड़ा लेकर शहर की ओर चला। काञ्चन मिश्र की दुकान मालूम करने में उसे कोई दिक्कत न हुई। उसके साथ का घोड़ा देखकर काञ्चन मिश्र ने कहा-"लोभ दुख का कारण है।" उसने सौ मुहरें पिङ्गल को देते हुए कहा-"यह बात किसी से न कहना। गुप्त ही रखना; क्योंकि इसमें तुम्हारा ही भला है।"

(अभी और है)





कुबड़ा दूल्हा

हंस द्वीप का एक राजा था। उसकी इन्दुमति नाम की एक लड़की थी। उसकी देखभाल करने के लिये एक आया थी। इन्दुमति हमेशा बाग-बगीचे में घूमती रहती और जो कोई पशु-पक्षी उसे वहाँ दिखाई देता, उसके बारे में पूछ-ताछ करती। इन्दुमति ने एक दिन एक गिरगिट देखी। प्रलय के पहले ये पहाड़ जितनी बड़ी हो गई थी। भूमि ब्रह्मा के सामने जाकर रोई घोई कि वह उनके भार को न उठा सकेगी। ब्रह्मा ने उनकी वृद्धि रोक दी। यह कहानी आया ने राजकुमारी को सुनाई। इन्दुमति को वह गिरगिट पसन्द आई। उसे ले जाकर उसने पिता की गोद में डाल दी।

राजा किसी और ख्याल में था। गिरगिट के पड़ते ही वह घबरा गया। उसे लड़की पर बड़ा गुस्सा आया।

नादान इन्दुमति ने खिलखिलाकर हँसते हुए कहा-"इस छोटी गिरगिट को देखकर ही डर गये हो? अगर यह और बड़ी हो गई तो क्या करोगे?"

"जब तक यह तेरी जितनी बड़ी नहीं हो जाती, तब तक तेरी शादी न करूँगा। देख, क्या करता हूँ।" राजा ने गुस्से में कहा।

"यह क्या बात है महाराज! छोटी लड़की है। अनजाने कह बैठी है, माफ़ कीजिये।" मन्त्री आदि ने कहा।

राजा ने ज़रा और ऐंठते हुए कहा-"जो मेरे मुख से निकल गया है, वह होकर ही रहेगा।"

राजा के यह कहते ही, आया इन्दुमति को गले लगाकर रोने लगी-"शायद मेरी छोटी मुन्नी की शादी ही न हो। मैं क्या करूँ? हाय रे भगवान!"

कुमारी शान्ति भटनागर



"रो मत! गिरगिट बड़ी होगी न?" इन्दुमति ने कहा।

"बड़ी नहीं होगी। ब्रह्मा का शाप है न!" आया ने कहा।

तब से रोज इन्दुमति मन ही मन प्रार्थना करने लगी-"हे ब्रह्मा! गिरगिट पर से शाप हटा दो, उसे मेरे जितना बड़ा कर दो।"

ब्रह्मा ने यह शाप तो हटा दिया पर यह बात साधारण न थी। वह रोज़ रोज़ एक एक अंगुली बढ़ती गई और जब इन्दुमति विवाह योग्या हुई तो वह भी एक बड़े अजगर जितनी बड़ी हो गई।

यह देख राजा बड़ा खुश हुआ। उसने गुस्से में कह ज़रूर दिया था। पर उसे डर था कि कहीं कहे अनुसार करना न पड़ जाये। अब सौभाग्य से उसका वह डर जाता रहा।

एक दिन मन्त्री ने आकर राजा से पूछा-"महाराज! राजकुमारी के विवाह के बारे में क्या सोचा है?"

"राजकुमारी ने जो गिरगिट पाल रखी है उसको मरवाकर उसका कलेजा बाहर निकलवा दीजिये। बेटी के विवाह के लिये सब देशों में निमन्त्रण भेजिये। निमन्त्रित व्यक्तियों में से जो कोई यह बता सकेगा कि यह कलेजा किस जन्तु का है, उसके साथ लड़की की शादी कर देंगे। बड़ा अक्लमन्द ही पता लगा सकेगा।" राजा ने कहा।

मन्त्री ने आज्ञानुसार करवा दिया, और गिरगिट के कलेजे को एक काँच के मर्तबान में रखवा दिया। फिर इन्दुमति की विवाह-तिथि इस प्रकार निश्चित की गई कि दूर दूर से निमन्त्रित व्यक्ति भी ठीक समय पर आ सकें।

राजकुमारी के विवाह की विचित्र व्यवस्था को देखकर आया बड़ी घबराई।

"यह राजा कोप करे तो आफत है, कृपा करे तो भी। क्या कोई यह मालूम कर सकेगा कि यह कलेजा गिरगिट का है? वह लड़की की शादी न करने के लिये ही ये सब चालें चल रहा है। अच्छी बात है।" आया ने सोचा।

विवाह की तिथि पास आई। दूर दूर से अतिथि आने लगे। आया उनके रहने की जगह पर गई और एक एक को गौर से देख आई। कोई भी उसे न जँचा। "सब यों ही हैं, कोई भी इन्दुमति के लायक नहीं।" आया ने सोचा।

इतने में तोते द्वीप का राजकुमार वहाँ आया। वह दूसरों में, तारों में चान्द की तरह था। बहुत खूबसूरत था। अक्लमन्द भी। इन्दुमति की जोड़ी का था। माया ने निश्चय किया- कुछ भी हो, उसके साथ ही राजकुमारी का विवाह होना चाहिये। वह अन्तःपुर वापिस गई। वहाँ काम करनेवाले चार कुबड़ों में एक विश्वस्त कुबड़े को बुलाकर कहा- "अरे! कल राजकुमारी का स्वयंवर है। काँच के मर्तबान में रखे दिल को दिखाकर निमन्त्रित व्यक्तियों से पूछा जायेगा कि वह किस पशु का



है। जो यह बतायेगा, उसके साथ राजकुमारी की शादी होगी। इसलिये जैसे भी हो आज रात को तोते द्वीप के राजकुमार के पास जाकर बता आ कि मर्तबान में रखा दिल गिरगिट का है। अगर तू यह काम कर आया तो मैं तुझे अच्छा इनाम दूँगी। देख, यह किसी और को पता चला तो तेरा सिर कटवा दूँगी। ख़बरदार!"

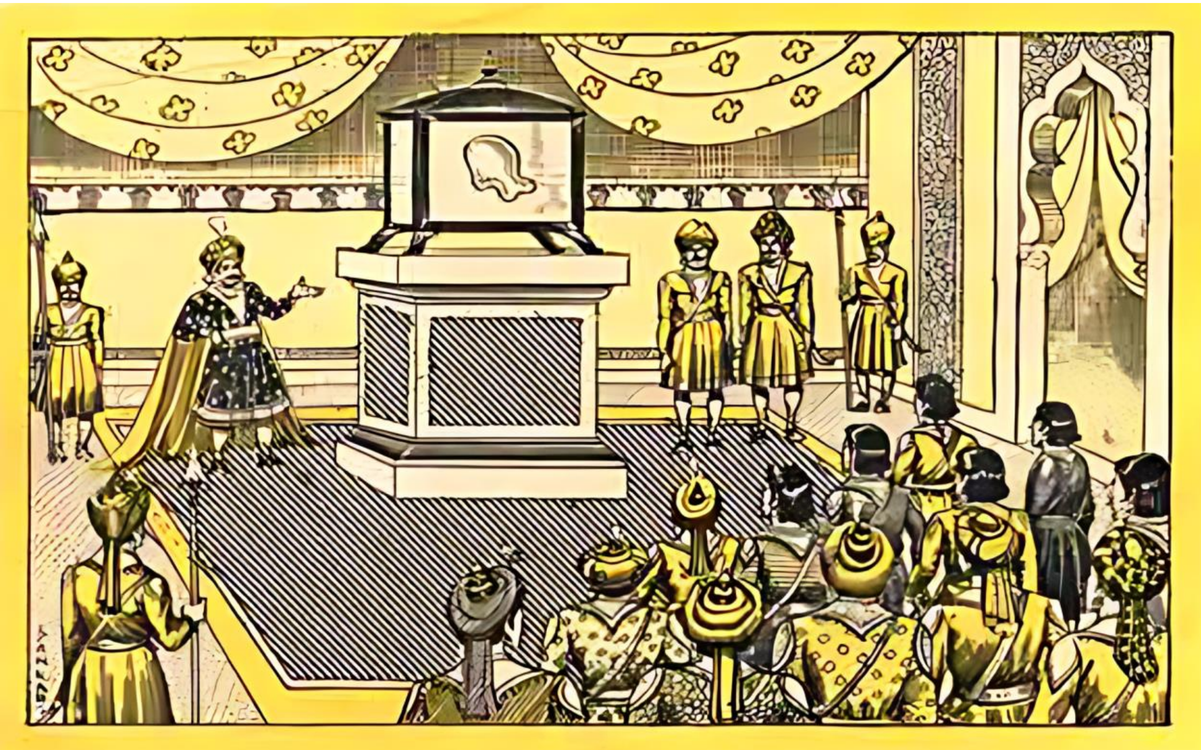
कुबड़ा मान गया। पर उस रात को वह तोते द्वीप के राजकुमार से न मिला। उतने अतिथियों में, बिना किसी और के जाने, राजकुमार से यह कहना बहुत कठिन

था। कुबड़े को दुर्बुद्धि भी सूझी। "जब राजकुमारी से विवाह करने के लिए मैं आवश्यक रहस्य जानता हूँ, तब दूसरों से क्यों कहा जाय? मैं स्वयं ही उनसे शादी कर सकता हूँ।" इसलिये वह जाकर आराम से सो गया।

अगले दिन सब अतिथि राजमहल में आये। राजा ने उन सब को काँच का मर्तबान दिखाकर कहा-"इसमें किस जन्तु का दिल है? जो यह बता देगा, उसके साथ में अपनी लड़की की शादी कर दूँगा और आधा राज्य दूँगा।"

जिसको जो सूझा उसने वह बताया। पर किसी ने भी कुत्ते से छोटे जानवर का नाम न लिया। कई ने यह भी कहा कि वह हाथी का दिल था। सबके बाद, कुबड़े ने आगे आकर कहा-"महाराज! अगर मैं यह बता दूँ कि यह दिल किस जन्तु का है तो क्या आप राजकुमारी का मुझ से विवाह करेंगे? मुझे आधा राज्य देंगे?"

"मैं अपनी बात का पक्का हूँ। जानते हो तो कहो?" राजा ने कहा। "यह गिरगिट का दिल है।" कुबड़े ने कहा।



सब खिल खिलाकर हँसे। राजा ने गम्भीर होकर कहा-"हँसिये मत। उसने ठीक कहा है। यह दिल एक गिरगिट का है। वचन के अनुसार राज कुमारी का विवाह इस कुबड़े से होगा.... उसे आधा राज्य भी मिलेगा.... अतिथियों से प्रार्थना है कि वे विवाहोत्सव में भाग लेकर हमें अनुगृहीत करें।"

झट सजा-धजाकर, कुबड़े को दुल्हा बना दिया गया। उसके बाद दावत हुई। उस समय मनोरञ्जन का भी प्रबन्ध किया गया। तीनों कुबड़ों ने मिलकर ऐसा मनोरञ्जन किया कि अतिथियों का हँसते-हँसते पेट फूल गया। फिर उन्होंने दूल्हे के पास जाकर कहा-"अब तुम राजा होने जा रहे हो। राजकुमारी से शादी करने जा रहे हो। बड़े हो गये हो। हमें ईनाम देकर खुश करो।"

कुबड़े को गुस्सा आ गया। वह अपने आसन से उठा और उन तीनों कुबड़ों का गला पकड़कर धकेलते हुए उसने कहा-"जाओ बाहर, कुबड़े कहीं के।"

राजकुमारी को उन्हें देखकर दया आ गई। उसने एक नौकर से धीमे से कहा-





"उन्हें मेरे कमरे में ले जाओ। मैं अभी आकर उनको ईनाम दूँगी।"

भोजन के बाद, इन्दुमति जल्दी जल्दी अपने कमरे में गई। उसकी कुबड़े प्रतीक्षा कर रहे थे। इन्दुमति ने किवाड़ बन्दकर दिये। कुबड़ों को इनाम देने के लिये उसने सन्दुक खोलकर जेवर-जवाहरात, कपड़े-लते बाहर रख दिये।

इतने में बाहर किसी के आने की आहट सुनाई दी। दरवाजा किसी ने खटखटाया। "कौन हैं?" इन्दुमति ने पूछा। राजा और दुल्हे ने जवाब दिया।

इन्दुमति को कुछ न सूझा कि क्या करे। उसने कुबड़ों को सन्दूक में रखकर ताला लगा दिया। फिर उसने किवाड़ खोला। इन्दुमति के पिता और होनेवाले पति कमरे में घुसे।

बहुत देर हो गई, पर वे बाहर न गये। उसके पिता ने बहुत बड़ा उपदेश दिया। कहा कि वचन देकर मुकर जाना उनके वंश में नहीं है। पिता की आज्ञा का पालन करना पुत्री का धर्म है। पति के सिवाय, स्त्री के लिये कोई और परमात्मा नहीं है। महाराजाओं में भी कुबड़े हैं। शाम तक, महाराजा लड़की से बातें करता रहा, फिर दूल्हे के साथ विवाह की तैयारियाँ देखने चला गया। विवाह का मुहूर्त आधी रात में था।

उनके जाते ही इन्दुमति ने सन्दुकों के ताले खोले। पर तब तक कुबड़े साँस घुटकर मर चुके थे। इन्दुमति ने अपनी आया से जो कुछ गुज़रा था, कहा।

आया तुरन्त शहर में जाकर एक हट्टे-कट्टे आदमी को बुला लाई। उससे कहा-"अरे, तुम्हें एक जरूरी काम छुपकर करना होगा। राज महल में

एक गट्ठर है। उसे ले जाकर अन्धेरे में समुद्र में फेंक देना होगा। काम पूरा होने पर बीस रुपये दूँगी।" ईन्धन काट-कूटकर बेचनेवाले उस गरीब को यह रक्कम बहुत बड़ी लगी।

आया उसको साथ लेकर इन्दुमति के कमरे में गयी। वहाँ एक बोरा था। उस बोरे को उठाकर वह आदमी चला गया। उसे समुद्र में फेंक कर वह अपने बीस रुपये वसूल करने आया। पर बोरा वहीं का वहीं पड़ा था।

"यह बोरा बड़ा धोखेबाज है। तुम्हें चकमा देकर वापिस आ गया है। कम से कम इस बार तो समुद्र में फेंक आओ।" आया ने कहा।

इस बार, गहरे समुद्र में जाकर उस लकड़हारे ने बोरे को फेंक दिया। पर जब वापिस आया तो बोरा फिर उसी जगह पर था।

लकड़हारे को बड़ा गुस्सा आया। बोरे को समुद्र के पास ले जाकर उसने खोला। उसमें उसे कुबड़े का शव दिखाई दिया।

"यह दिखाते हो कि मर गये हो? तेरी चालाकी मेरे सामने नहीं चलेगी।"



उसने कुल्हाड़ी से उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये और उनको समुद्र में फेंक दिया। और खाली बोरा लेकर वापिस गया।

वह राजकुमारी के कमरे में जाने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ रहा था कि उसको सामने कुबड़ा दिखाई दिया।

"अरे! गज़ब है! टुकड़े टुकड़े करके फेंक दिया। तब भी जीते हो? देख अब क्या करता हूँ!" कहता कहता, वह जल्दी जल्दी सीढ़ियों पर चढ़ा। कुबड़े को पकड़कर उसका गला घोट दिया। गले में कपड़े ठूँस दिये। उसे ले गया। उसने

अपने घर के पास ही चिता बनाकर उसे बोरे के साथ जला दिया और उसकी राख ले जाकर समुद्र में मिला दी। काफ़ी देर बाद उसने आया के पास जाकर कहा-"बड़ी मेहनत की है। ईनाम दिलवाइए।"

"इतनी देर क्या करते रहे?"आया ने पूछा।

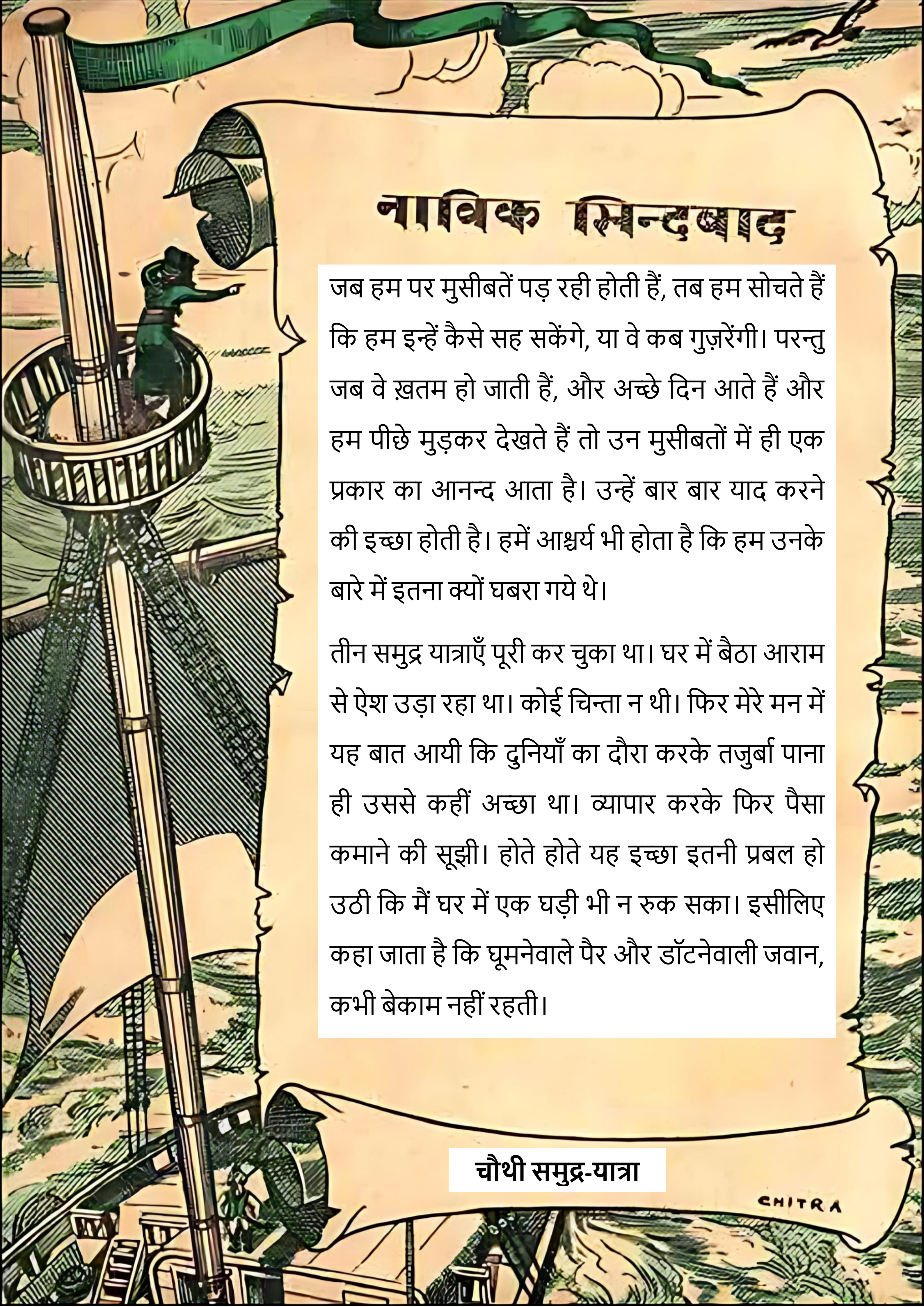
"उस कुबड़े को में तीन बार समुद्र में फेंक आया। पर चौथी बार फिर मेरे सामने आ मरा। ज़रीदार कपड़े पहनकर मैंने उसे सीढ़ियों पर चढ़ते देखा। उसे चौथी बार पकड़कर, जलाकर उसकी राख समुद्र में डाल आया हूँ।" लकड़हारे ने कहा।

यह सुनते हो इन्दुमति और आया की खुशी का ठिकाना न रहा। आया ने उसे मोतियों की एक थैली ईनाम में दी। राजकुमारी ने अपने गले का हार दिया। वह हज़ार बार झुक झुककर प्रणाम करके चला गया।

मुहूर्त पास आ गया। कुबड़े दुल्हे का कहीं पता न लगा। आया ने जाकर राजा से कहा-"महाराजा। एक पहर पहले दूल्हे सीढ़ियों से नीचे गिर पड़े थे। उनकी कमर टूट गई, और वे मर गये। कहीं ऐसा न हो कि यह सब को मालूम हो जाये, मैंने उनका दहन-संस्कार भी करवा दिया है। परन्तु इस कारण राजकुमारी की शादी रोकने की कोई ज़रूरत नहीं। तोते द्वीप के राजकुमार से उनकी शादी कर दीजिये। उन दोनों की जोड़ी अच्छी रहेगी।"

राजा यह मान गया। राजकुमार और राजकुमारी का विवाह वैभव से मनाया गया।





नाविक सिन्दबाद

जब हम पर मुसीबतें पड़ रही होती हैं, तब हम सोचते हैं कि हम इन्हें कैसे सह सकेंगे, या वे कब गुज़रेंगी। परन्तु जब वे ख़तम हो जाती हैं, और अच्छे दिन आते हैं और हम पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन मुसीबतों में ही एक प्रकार का आनन्द आता है। उन्हें बार बार याद करने की इच्छा होती है। हमें आश्चर्य भी होता है कि हम उनके बारे में इतना क्यों घबरा गये थे।

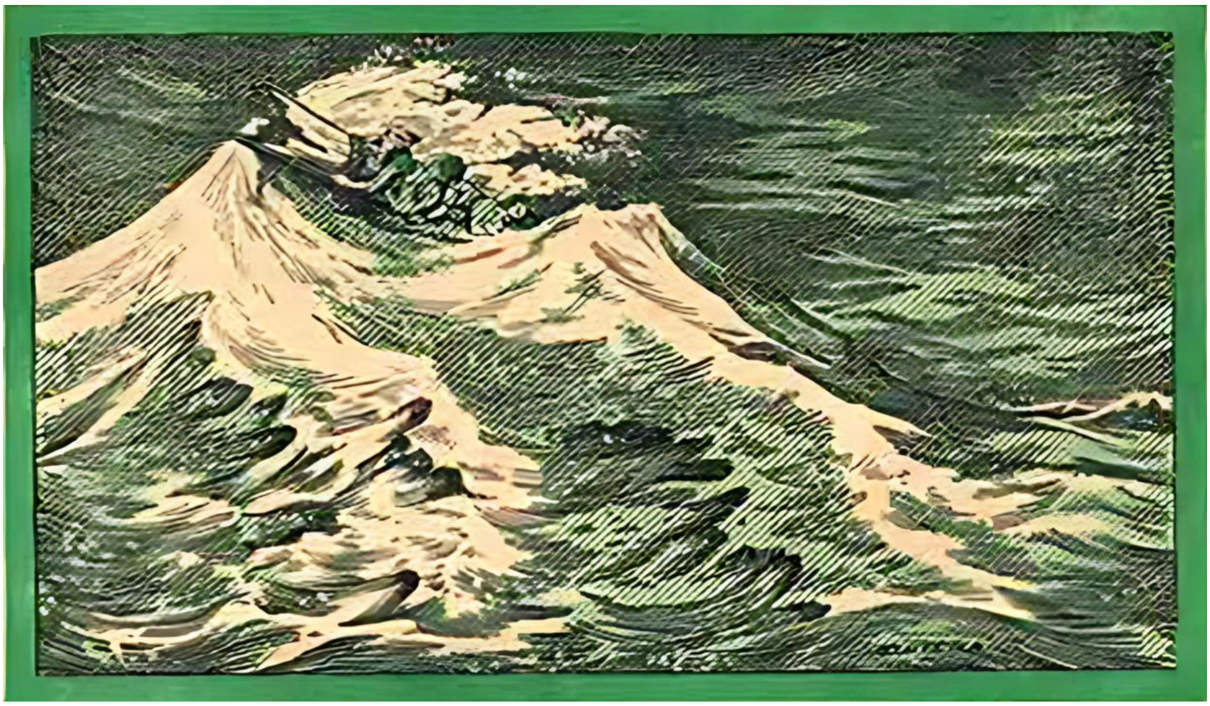
तीन समुद्र यात्राएँ पूरी कर चुका था। घर में बैठा आराम से ऐश उड़ा रहा था। कोई चिन्ता न थी। फिर मेरे मन में यह बात आयी कि दुनियाँ का दौरा करके तजुर्बा पाना ही उससे कहीं अच्छा था। व्यापार करके फिर पैसा कमाने की सूझी। होते होते यह इच्छा इतनी प्रबल हो उठी कि मैं घर में एक घड़ी भी न रुक सका। इसीलिए कहा जाता है कि घूमनेवाले पैर और डॉटनेवाली जवान, कभी बेकाम नहीं रहती।

चौथी समुद्र-यात्रा

मानों भाग्य ने धकेल दिया हो, घर-बार, जमीन-जायदाद, सब छोड़कर पहले से अधिक क़ीमती चीजें खरीदकर मैं उन्हें ले, बसरा पहुँचा। वहाँ एक बड़ा जहाज मैने पकड़ा। उसमें कई बसरा के व्यापारी भी थे। वह जहाज बड़ी तेजी से चला। वह कई द्वीप और देश गया। जहाँ कहीं वह लङ्गर डालता, खूब व्यापार होता। खूब नफा भी होता।

एक बार अचानक बीच समुद्र में लङ्गर डालकर कप्तान ने बड़े जोर से चिल्लाते हुए कहा-"अब हमारा काम तमाम हो गया है। खुदा का नाम लो।" उसी समय तूफ़ान चला। बड़ी बड़ी तरङ्गें...... हाथियों की तरह, जहाज़ से टकराने लगीं। थोड़ी देर में ही उनकी चोट से जहाज टुकड़े टुकड़े हो गया। जहाज में जितना माल रखा था समुद्र ने निगल लिया। कई व्यापारी देखते देखते अपने माल के साथ समुद्र के पेट में समा गये।

अल्लाह की मेहरबानी से मैं और कुछ व्यापारी, एक बड़े शहतीर पर जा बैठे। लहरों ने हमें इधर उधर लताड़ा। फिर हवा ने हमें किनारे पर जा पटका।





तूफ़ान के कारण हमारी इतनी बुरी हालत थी कि जो किनारे पर पड़े, वहीं रात भर बेसुध सोते रहे।

सवेरे उठने पर ऐसा लगा जैसे थोड़ी-सी ताकत आ गई हो। उठ खड़े हुए। हमने चारों ओर निगाह दौड़ायी। फिर अन्दर की ओर गये। थोड़ी दूरी पर हमें एक महल दिखाई दिया। हमारे देखते देखते उस महल की ड्योढ़ी में से, काले कलूटे व्यक्ति भागे भागे हमारी तरफ आये। वे पशुओं के चमड़े के कपड़े पहने हुए थे। बिना कुछ कहे सुने वे हमें उस बड़े महल में ले गये। वहाँ एक ऊँचे सिंहासन पर, एक राजा बैठा हुआ था। हमें बैठने के लिए उन्होंने सङ्केत किया। हम बैठ गये।

क्षण में ही उन काले कलूटों ने हमारे सामने ऐसा भोजन परोसा, जिसके बारे में हमने न कभी सुना था, न देखा ही था। उसको देखकर मुझे छूने की भी इच्छा नहीं हुई। मुझे कोई सन्देह हो रहा था। पर चूँकि मेरे मित्र बहुत भूखे थे, वे जल्दी जल्दी चाट चाटकर सारा भोजन हजम कर गये। मेरा वह भोजन न खाना ही अच्छा था, यह मुझे बाद में मालूम हुआ।

मेरे दोस्त जैसे जसे खाते जाते थे, वैसे वैसे उनकी भूख भी बढ़ती जाती थी। मुझे उनका व्यवहार अच्छा न लगा। वे घण्टों खाते रहे। खाते खाते, उनका खाने का तरीका भी पशुओं का सा हो गया।

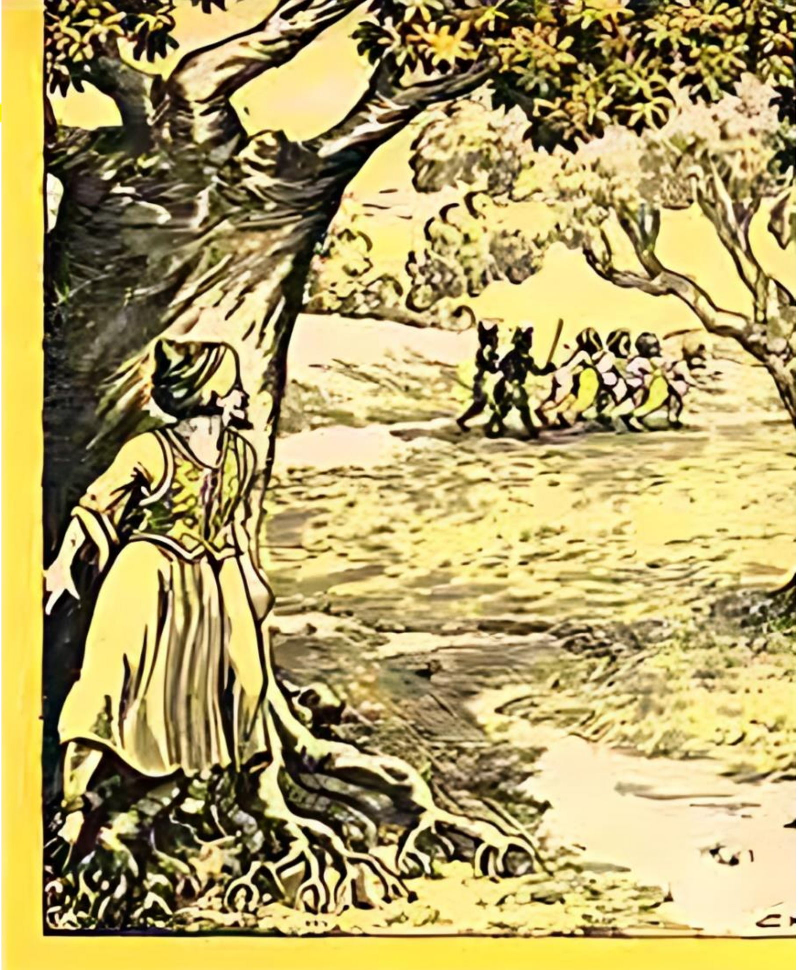
वे खा ही रहे थे कि काले कलूटों ने किसी मर्तबान में से कुछ लेकर उनके शरीर पर पोतना शुरू किया। इसके बाद, मैंने अपने मित्रों के पेट एक एक अंगुली फूलते देखा। ज्यों ज्यों उनका पेट बढ़ता जाता था, त्यों त्यों उनकी भूख भी बढ़ती

जाती थी। उनकी भूख न मिटता देख, मैं अचरज में पड़ गया।

यह सब देखता मैं भला मुख में कौर कैसे रखता? जब मेरे शरीर पर उन्होंने कुछ पोतना चाहा तो मैंने मना कर दिया। यह अच्छा ही हुआ। क्योंकि मुझे जल्दी ही मालूम हो गया कि वे नर-भक्षक थे और मनुष्य की चरबी बढ़ाने के लिए ही वे इस तरह खिलाते थे। मुझे इस बात का भी पता लग गया कि रोज उनका राजा एक एक मनुष्य को भून कर खाता था, जब कि बाकी काले कलूटे उसे कच्चा ही चबा जाते थे।

यह मालूम होने पर मुझे डर लगने लगा कि मेरी और मेरे मित्रों की क्या गति होगी? यह आफत कैसे दूर की जा सकती है? पेट के बढ़ने के साथ साथ मेरे मित्रों की अक्ल भी मारी जा रही थी। आख़िर वे शिकार के पशुओं की तरह हो गये। वे काले कलूटे तब उनको हरे मैदान में चराने के लिए ले गये।

मैं भय और भूख से सुखकर काँटा हो गया। उनको मुझ पर थोड़ा भी लालच न रहा। वे मुझे भूल गये।



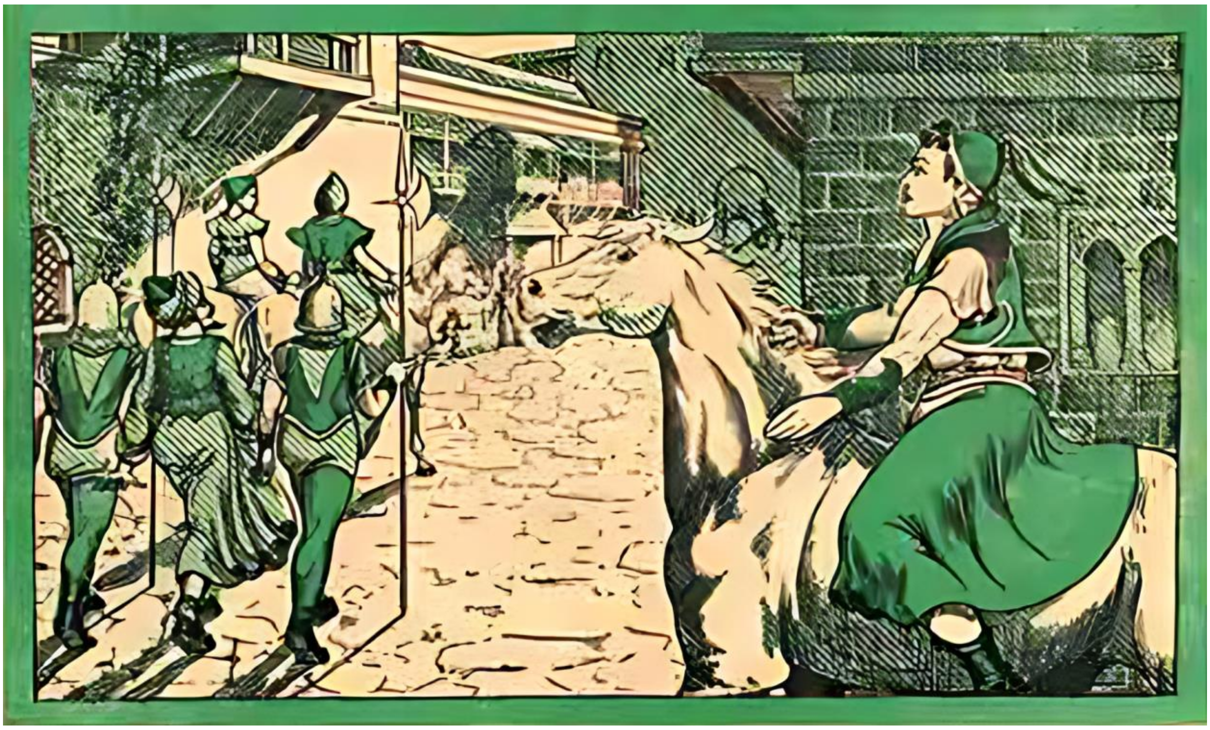
इसलिए मैं उनके महल से एक दिन बाहर निकल गया और द्वीप के किनारे-किनारे चलने लगा। मैं इस प्रयत्न में रहा कि कोई मुझे न देख ले। पर रास्ते में, मुझे मेरे मित्रों को हाँककर ले जाते हुए काले कलूटे दिखाई दिये। उनकी नज़र बचाने के लिए, मैं पेड़ों की आड़ में छुप गया।

मैं रात भर बिना रुके चलता गया। नरभक्षकों से दूर भागने की फिक्र में मुझे नींद भी न आई। रास्ते में, कन्दमूल खाते हुए, लगातार छः दिन, छः रात चलकर, मैं एक ऐसी जगह पहुँचा, जहाँ

हम जैसे लोग रहते थे। यह जगह द्वीप के पहले किनारे पर थी। उन लोगों ने मेरी भाषा में बातचीत करते हुए मुझे घेर लिया। तब मुझे बहुत खुशी हुई। मुझे अपनी भाषा सुने जमाना हो गया था। मैंने उनको अपने कष्टों के बारे में कहा। मुझे मौत के मुँह से जिन्दा वापिस आया देख उन्होंने मुझे तरह तरह की चीजें खिलाई। मेरी बड़ी आवभगत की। एक घण्टा आराम करने के बाद, वे मुझे अपनी नौकाओं में अपने राजा के पास ले गये। वह राजा एक और द्वीप में रहा करता था।

राजधानी में भीड़-भड़ाका अधिक था। दुकानों में हर तरह की चीजें थी। सड़कें चौड़ी और साफ़ थीं। सड़कों पर, अच्छी नस्ल के घोड़ों पर, बिना जीन के कई लोग इधर उधर चढ़े जा रहे थे। मैंने राजा के दर्शन करके पूछा-"आपके देश में, लोग बिना जीन के घोड़ों की सवारी कर रहे हैं। इसकी क्या वजह है? सवारी के लिए जीन का होना अच्छा ही है न!"

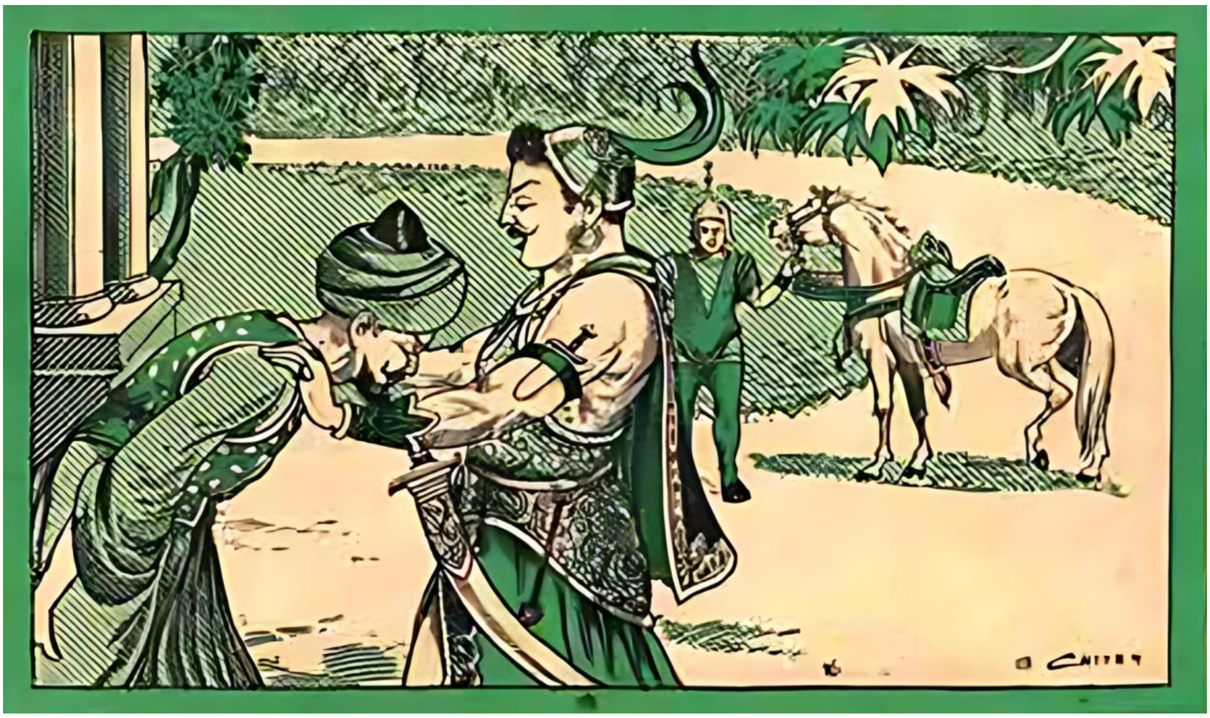
"जीन का क्या मतलब है? हमने तो उसे कभी देखा नहीं ।" राजा ने आश्चर्य के साथ कहा।



"ऐसी बात है, तो मुझे एक बनाने की इजाज़त दीजिये। उससे आपको बड़ा आराम मिलेगा। यह आप खुद देख लेंगे।" मैंने कहा।

राजा मान गया। एक कारीगर बढ़ई को बुलाकर, उससे एक अच्छी काठ की जीन बनवाई। फिर उसके लिए एक पंखोंवाला गद्दा तैयार करवाया, उसके ऊपर चमड़ा चढ़वाकर उस पर रङ्ग बिरङ्गी किनारियाँ बनवाई। तब एक लोहार के पास जाकर लगाम लगाने के लिए एक लोहे का टुकड़ा बनवाया। दो रिकाब तैयार करवाई। क्योंकि मैं खुद देखरेख कर रहा था, इसलिए जैसा मैंने चाहा वैसा उसने बनाकर दे दिया।

यह सब बन जाने के बाद, मैं अस्तबल में गया और वहाँ बँधे घोड़ों में से एक अच्छे घोड़े को चुनकर मैंने उस पर जीन लगा दी। उसके गले में झालरें बाँध दी। फिर उसको ले जाकर राजा के सामने पेश किया। राजा घोड़े पर चढ़ा। जीन का आराम, लगाम के कारण घोड़े को काबू में रखने की सुविधा देखकर वह बहुत खुश हुआ। उसने मुझे बहुत कुछ ईनाम दिया।



तब मन्त्री ने मुझे बुलवाया। मुझसे अपने घोड़े के लिए भी एक जीन तैयार करवाई। बाद में, उस देश के बड़े बड़े लोगों ने मुझसे जीन बनवाई और मुझे बहुत सा धन दिया। मैं उस देश में सब से अधिक धनी हो गया।

राजा से मेरी खासी दोस्ती हो गई। बातों के सिलसिले में उन्होंने एक बार मुझ से कहा-"देखो सिन्दबाद! तुम मेरे विश्वासपात्रों में सब से अधिक विश्वासपात्र हो। मुझे यह भी नहीं लगता कि तुम परदेशी हो। क्या तुम मेरी एक इच्छा पूरी कर सकोगे?"

"आप कहें और में न करूँ; यह कभी हो सकता है? कहिये।" मैंने कहा।

"तो तुम्हें एक सुन्दर स्त्री से शादी करनी होगी। वह अच्छे घराने की है। पैसा भी बहुत है। उसको विवाह करने से, मुझे उम्मीद है कि तुम हमेशा के लिए यहाँ रह जाओगे। देखो, न न करना, सिन्दबाद।" राजा ने कहा।

मेरी समझ में नहीं आया कि मैं क्या कहूँ? ऐसा लगा जैसी मेरी अक्ल मारी गई हो। मैं उनकी ओर न देख सका। मैंने सिर नीचा कर लिया।

"कहते क्यों नहीं हो?" राजा ने पूछा।

"महाराज! मैं आपका सेवक हूँ। आप अपनी इच्छानुसार कीजिये।" मैंने कहा।

तुरन्त उन्होंने दुल्हन को बुलाया और काजी से मेरा विवाह कराया। वह खूबसूरत ही नहीं, बड़ी रईस भी थी। उसके कई महल, जमीन-जायदाद, गाड़ियों वगैरह थीं। राजा ने हमारे लिए एक बढ़िया मकान, दासियाँ, नौकर-चाकर, स्त्री-मर्द गुलाम दिये। [अभी और है]





किसी जमाने में, पाटलीपुत्र का राजा शूरवर्मा था। वह बड़ा निर्दय था। जितनी बहादुरी वह युद्ध स्थल में दिखाता, उतनी ही क्रूरता वह कैदियों से बरतता। उसके शासन में अपराधियों को मरण दण्ड दिया जाता था। मरण-दण्ड फाँसी देकर अथवा सिर कटवाकर नहीं दिया जाता था; बल्कि दण्डित व्यक्तियों को शेर, चीते आदि से लड़वाया जाता और इस तरह उन्हें मरवा कर राजा अपना मनोरञ्जन करता।

यद्यपि यह इतना क्रूर था, तो भी वह अपने लड़के से बहुत प्रेम करता था। उसके एक ही लड़का था। उसका नाम था चन्द्रवर्मा। पिता जितना निर्दय था, उतना ही वह सहृदय था। अगर किसी को कष्ट होता तो, वह देख नहीं पाता। उसका एक बड़ा मित्र था, जिसका नाम सुबुद्धि था। दोनों की उम्र एक ही थी। देखने में वे दोनों एक जैसे थे, जुड़वे-से उगते थे। हमेशा वे दोनों साथ रहते।

चन्द्रवर्मा और सुबुद्धि ने एक ही गुरु के पास शिक्षा पाई थी और अब विद्या भी एक साथ सीखी थी। जब वे बीस वर्ष के थे, तब शूरवर्मा ने जयन्त देश पर आक्रमण किया। और वह अपनी सेनाओं के साथ, अपने लड़के चन्द्रवर्मा और उसके मित्र सुबुद्धि को भी ले गया। पहली बार युद्ध में चन्द्रवर्मा भाग ले रहा था।

युद्ध जल्दी ही ख़तम हो गया। जयन्त देश का राजा रणजीत युद्ध में हार गया। अपना किला और साथियों को छोड़कर वह जङ्गलों में जा छुपा। उसके ठिकाने के बारे में बहुत कम लोग जानते थे।

श्री सिद्धनाथ



ज्यों ही शूरवर्मा किले में घुसा, त्यों ही महाराजा रणजीत की लड़की ऊर्मिला आँसू बहाती हुई दिखाई दी। ऊर्मिला असाधारण सुन्दरी थी। जयन्त देश के राजा की वह इकलौती लड़की थी। उसको देखते ही शूरवर्मा ने उससे विवाह करना चाहा। जिस राज्य के लिए उसने इतना बड़ा युद्ध किया था, उस राज्य की अपेक्षा उसे वह कन्या अधिक महत्वपूर्ण लगी।

ऊर्मिला को देखते ही चन्द्रवर्मा भी उससे प्यार करने लगा। उसको रोता देख उसका हृदय पिघल-सा उठा। जयन्त देश को पराजित करने में क्योंकि उसने भी भाग लिया था, इसलिए ऊर्मिला की हालत पर वह पछता रहा था। वह जानता था कि उसका पिता शत्रुओं के प्रति बड़ा क्रूर था। वह डरने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि उसका पिता, ऊर्मिला और उसके पिता को शेरों के सामने डाल दे।

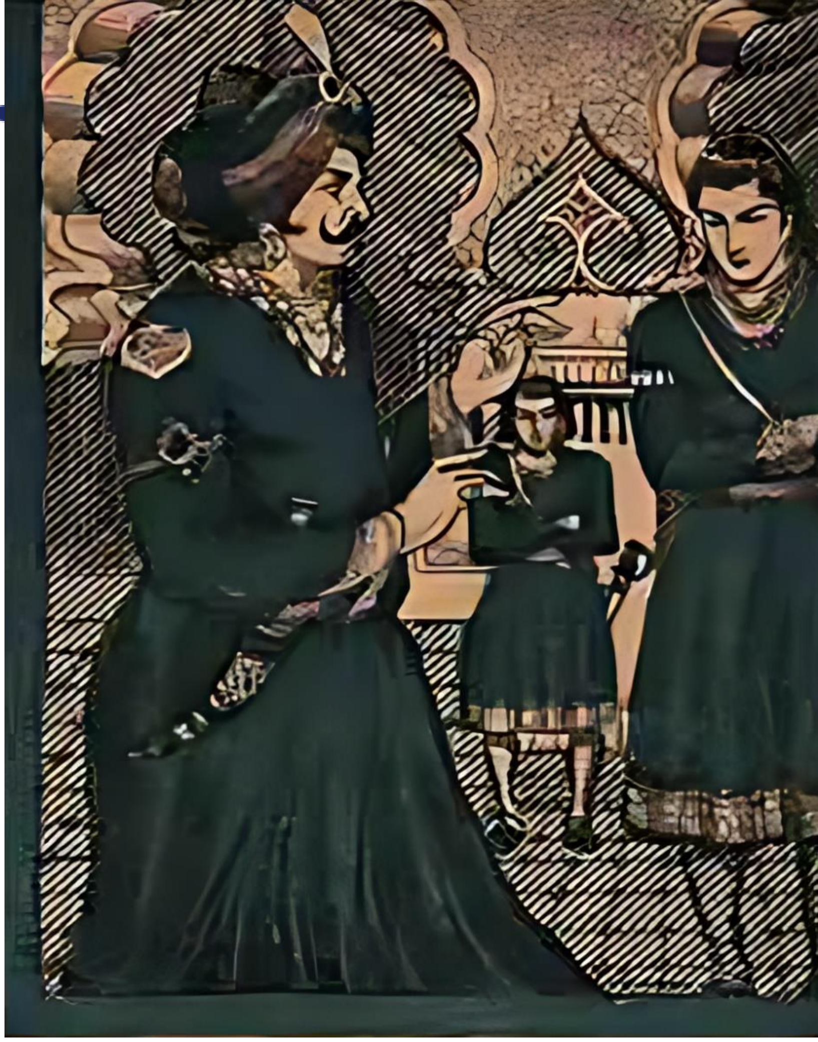
वह मौका पाकर ऊर्मिला के कमरे में गया। उसने उससे कहा-"पराजय पर दुःखी न हो। तुम्हें रोता देख, मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है। अगर मैं युद्ध भूमि में घायल होकर अपना खून बहाता तब भी मैं इतना दुःखी न होता। मेरे पिता मेरी बात नहीं ठुकरायेंगे। मैं उनसे कहकर, ऐसी सन्धि करवा दूँगा, जो तुम्हारे योग्य हो, और हमारे भी योग्य हो।"

पहले तो चन्द्रवर्मा की बातों पर ऊर्मिला को विश्वास न हुआ, क्योंकि उसके पिता के शत्रुओं में वह भी एक था। परन्तु उसकी बातों को गौर से सुनने के बाद वह प्रभावित हुई। वह उस पर धीमे धीमे भरोसा भी करने लगी।

शूरवर्मा यह न जान सका कि उसकी तरह उसका पुत्र भी ऊर्मिला से प्रेम कर

रहा था। परन्तु उसे इतना जरूर सन्देह हुआ कि ऊर्मिला चन्द्रवर्मा से मेल-मिलाप करके, अपने पिता की मदद करना चाहती थी। उसने तुरन्त अपने लड़के को बुलाकर कहा-"बेटा! रणजीत भाग गया है। सन्धि समझौता करने के लिए कोई नहीं है। रणजीत की खोज करवा रहा हूँ। यहाँ के मामले इतनी जल्दी खतम होनेवाले नहीं हैं। तुम इस बीच अपनी छावनी में जाओ और वहाँ का काम-काज देखो। जब सन्धि का समय आयेगा, तब मैं तुम्हें यहाँ बुला भेजूँगा।"

ऊर्मिला को छोड़कर चन्द्रवर्मा जाना नहीं चाहता था। पर आज्ञा की अवहेलना भी न कर सकता था। उसको कुछ नहीं सूझा कि क्या किया जाय। उसने अपने मित्र सुबुद्धि से मिलकर कहा-"अरे भाई! ऊर्मिला की रक्षा हर तरह से करना। हमारे सिवाय उसका कोई नहीं है। तुम जानते ही हो कि पिता जी का हृदय पत्थर जैसा है। इसलिए रोज की खबर रोज मुझे पहुँचाते रहो। भूलना नहीं। और देखो, ऊर्मिला को किसी भी हालत में, किसी प्रकार की



तकलीफ न हो।" यह कहकर वह अपनी छावनी में चला गया।

अपने लड़के के जाते ही शूरवर्मा ने ऊर्मिला के पास जाकर कहा-"तुम मुझे हमला करनेवाले के रूप में न देखो। मैं तुम्हारे वंश या राज्य का कोई अपकार नहीं करना चाहता हूँ। एक शर्त पर मैं तुम्हारे पिता से सन्धि करने के लिए तैयार हूँ। शर्त यह है कि तुम्हें मुझ से शादी करनी होगी। इस बारे में, तुम अपने पिता को खबर भेज सकती हो, पर याद रखना, यह काम बहुत जल्दी हो जाना चाहिए।"

इसके बाद, शूरवर्मा ने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि राजकुमारी को वे कैदी न समझें और उसको किले में इच्छानुसार घूमने-फिरने दें। परन्तु उसने अपने दो विश्वस्त सैनिकों को बुलाकर कहा-"यह मालूम करो कि ऊर्मिला से कौन कौन बातें करते हैं। इसकी ख़बर मुझे फौरन देते रहना।" शूरवर्मा के कहने के अनुसार, ऊर्मिला ने उसकी इच्छा के बारे में, मन्त्री द्वारा अपने पिता को कहला भेजा। फिर उसने सुबुद्धि को बुलवाया। सुबुद्धि को ऊर्मिला के कमरे में जाता देख, उन भेदिये सैनिकों ने राजा के पास ख़बर पहुँचाई। तुरत शूरवर्मा ने आज्ञा दी कि हाथ-पैर बाँधकर सुबुद्धि को जेल में डाल दिया जाय।

इस बीच में सुबुद्धि ने पता लगा लिया कि शूरवर्मा ऊर्मिला से विवाह करना चाहता है और ऊर्मिला चन्द्रवर्मा से विवाह करना चाहती है। उसने ऊर्मिला को वचन दिया कि कुछ भी हो, यह बात जैसे तैसे चन्द्रवर्मा तक पहुँचा देगा। परन्तु इतने में सैनिक उसको पकड़कर ले गये और उसको कैद में डाल दिया। सुबुद्धि भौंचका रह गया। उसे कुछ नहीं सूझा।



मन्त्री की खबर मिलते ही जङ्गलों में छुपा राजा रणजीत, गुप्त-मार्ग से किले में आया। शूरवर्मा से ऊर्मिला की शादी के विषय में उसके पिता को कोई आपत्ति न थी। सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए और विवाह को घूम-धाम से मनाने के लिए एक अच्छा दिन निश्चित किया गया।

छावनी में चन्द्रवर्मा को सुबुद्धि से कोई भी ख़बर न मिली। वह घबराने लगा। इसके अलावा सैनिकों में कई अफवाहें उड़ने लगीं। वे कह रहे थे कि महाराजा रणजीत वापिस आ गये थे, जल्दी ही सन्धि होनेवाली थी और वे सब वापिस पाटलीपुत्र जा सकेंगे।

एक दिन रात को मामूली कपड़े पहन कर चन्द्रवर्मा किले को और निकला। राह चलते आदमियों से उसे पता चला कि कल ही उसका पिता ऊर्मिला से विवाह करनेवाला है और सुबुद्धि को देशद्रोह के अपराध पर कैद में डाल दिया गया है। किले में घुसकर वह सीधा जेल में गया। वहाँ उसने पहरेदारों से कहा कि वह शूरवर्मा का लड़का था। उसने उन्हें सुबुद्धि के पास ले जाने के लिए कहा।





"आपके पिता कल उसे शेरों के सामने फिंकवा देंगे। उससे इस समय मिलना अच्छा नहीं है।" पहरेदारों ने कहा।

चन्द्रवर्मा यह सुनकर काँप गया।

"इसलिए ही उससे आज एक बात मालूम करनी है। मुझे तुरन्त उसके पास ले जाओ।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

एक पहरेदार, चन्द्रवर्मा को सुबुद्धि के पास ले गया। सुबुद्धि जगा ही हुआ था। यह घुटनों पर सिर पर दीवार के सहारे कुछ सोचता हुआ सिकुड़ा बैठा था।

चन्द्रवर्मा ने सुबुद्धि को बुलाया। सुबुद्धि ने बिना सिर उठाये कहा-"कौन हो तुम? तुमसे मेरा कोई काम नहीं है.. जाओ यहाँ स।"

चन्द्रवर्मा ने पहरेदार को जाने के लिये कहा। और स्वयं दरवाज़ा खोलकर, सुबुद्धि की कोठरी में वह गया। उसने सुबुद्धि के पास आकर कहा-"सुबुद्धि! देखो मैं चन्द्रवर्मा हूँ।"

सुबुद्धि ने खड़े होकर चन्द्रवर्मा का आलिङ्गन किया।

"जल्दी करो। हम अपने कपड़े बदल लें। तुम्हारी जगह में क़ैद में रहूँगा। मेरे कपड़े पहन कर तुम फौरन यहाँ से चले जाओ।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"नहीं, यह सम्भव नहीं है। कल मुझे शेरों के सामने फेंक दिया जायेगा।" सुबुद्धि ने कहा।

"तुम्हारी इस हालत का में ही कारण हूँ। मेरे कारण तुम्हें क्यों मरना चाहिये? मेरी बात मान जाओ। जल्दी मेरे कपड़े पहन लो।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

पर सुबुद्धि न माना। आखिर चन्द्रवर्मा ने राजा होने के नाते आज्ञा दी। सुबुद्धि

को आज्ञा का पालन करना पड़ा। चन्द्रवर्मा कपड़े बदलकर उसकी तरह दीवार से सटकर बैठ गया। और सुबुद्धि बाहर चला गया। पहरेदार ने बाहर जाते हुए सुबुद्धि को देखा। पर उसे कोई सन्देह न हुआ। वह ताला लगाकर चला गया।

अगले दिन शूरवर्मा का विवाह था। विवाह के पूर्व मनोरञ्जन का प्रबन्ध किया गया था। कैदी और शेर का युद्ध इस मनोरञ्जन के कार्यक्रम में शामिल था। इसके लिए एक खास घेरे का प्रबन्ध किया गया। उसमें शेर को छोड़ दिया गया। इसे देखने के लिए महाराजा रणनीत, उसकी पुत्री ऊर्मिला, दोनों देशों के उच्च अधिकारी बैठ हुए थे। घेरे के चारों ओर मामूली लोग बैठे थे।

चन्द्रवर्मा को कैद से लाया गया और शेर से लड़ने को कहा गया। उसे एक तलवार और ढाल दी गयी। उसके बाल बिखरे हुए थे। कैदी की पोशाक में उसे कोई भी चन्द्रवर्मा न कह सकता था। शूरवर्मा भी उसे सुबुद्धि समझ रहा था।

शेर ने पहले चन्द्रवर्मा की ओर देखा, फिर उसने मुँह फेर लिया। उसको



डराकर उकसाने के लिए, शूरवर्मा खड़ा होकर बिगुल बजाने लगा। उस शोर के कारण शेर चन्द्रवर्मा पर कूदा। वह ढाल को सामने करके एक तरफ कूदा। पर तलवार लेकर शेर तक न पहुँच सका। इससे शेर का गुस्सा और बढ़ गया। खूब गरजते हुए फिर शेर ने उस पर पञ्जा मारा। इस बार उसके पैरों पर तलवार का बार लगा।

इस भयङ्कर युद्ध को उर्मिला देवी न देख सकी। उसने आँखों पर हाथ रख लिये। शूरवर्मा के सिवाय यह युद्ध किसी

को अच्छा नहीं लग रहा था। कैदी का शेर के साथ अक्लमन्दी के साथ लड़ना, वह गौर से देखता रहा। पर वह इस फिक्र में था कि शेर कब कैदी को जीतता है।

ठीक इसी समय सुबुद्धि वहाँ हाँफता हाँफता भागा भागा आया। "महाराज! चन्द्रवर्मा को बचाइये। वह शेर उसे मार देगा।" वह चिल्लाया।

शूरवर्मा ने सुबुद्धि को पहचाना। "तो यानी सुबुद्धि उस शेर से नहीं लड़ रहा था?" राजा पागल सा हो गया। "मेरा बेटा .... शेर मार रहा है, बचाओ।" शुरवर्मा चिल्लाने लगा।

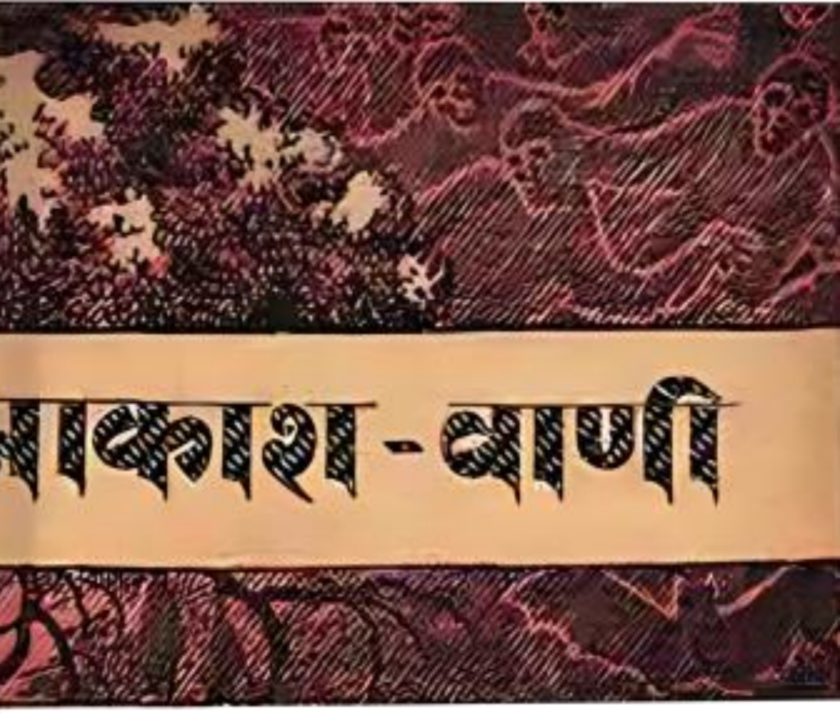
यह जानते ही कि चन्द्रवर्मा शेर के साथ लड़ रहा है, ऊर्मिला कटे हुए केले के पेड़ के समान गिर पड़ी।

दर्शकों में होहल्ला मचा। शेर भी शोर सुनकर डर गया। चन्द्रवर्मा इसी मौके की तलाश में था, उसने झट शेर के पेट में तलवार मार दी। शेर छटपटाता मर गया।

शूरबर्मा में बड़ा परिवर्तन आ गया। वह अपने पुत्र को गले लगाकर, स्त्री की तरह रोने लगा। कितनों ही के शेर द्वारा मारे जाने पर वह खुश हुआ था। पर वह यह कभी न भूल सका कि शेर को पुत्र पर हमला करता देख वह खुश हुआ था। उसने फिर कभी किसी से युद्ध न किया और न किसी के साथ निर्दयता का व्यवहार ही किया। वह बिल्कुल बदल गया और अपने पिछले दिनों की याद कर पछताता रहा।

चन्द्रवर्मा और ऊर्मिला का यथारीति विवाह हुआ। उसने पाटलीपुत्र और जयन्ती देश का राजा बनकर बहुत दिनो तक राज्य किया।





आकाश-वाणी



विक्रमार्क अपने हठ का पक्का था। पेड़ के पास वह फिर गया। शव को उतारकर, कन्धे पर डाल श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने हँसकर कहा- "राजा! तुम इतनी मेहनत कर रहे हो, पर जो होना है, उसको रोकने की तुम में कतई ताकत नहीं है। बहुत पहले, कुणाल नाम का युवक, इसी अज्ञान में अपनी जान खो बैठा। उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनाई:

किसी जमाने में, एक गाँव में कुणाल नाम का एक नौजवान रहा करता था। वह बड़ा दयालू था। हमेशा खुश रहता। वह नौकरी के लिए एक दिन अपना गाँव छोड़कर राजधानी की ओर निकला।

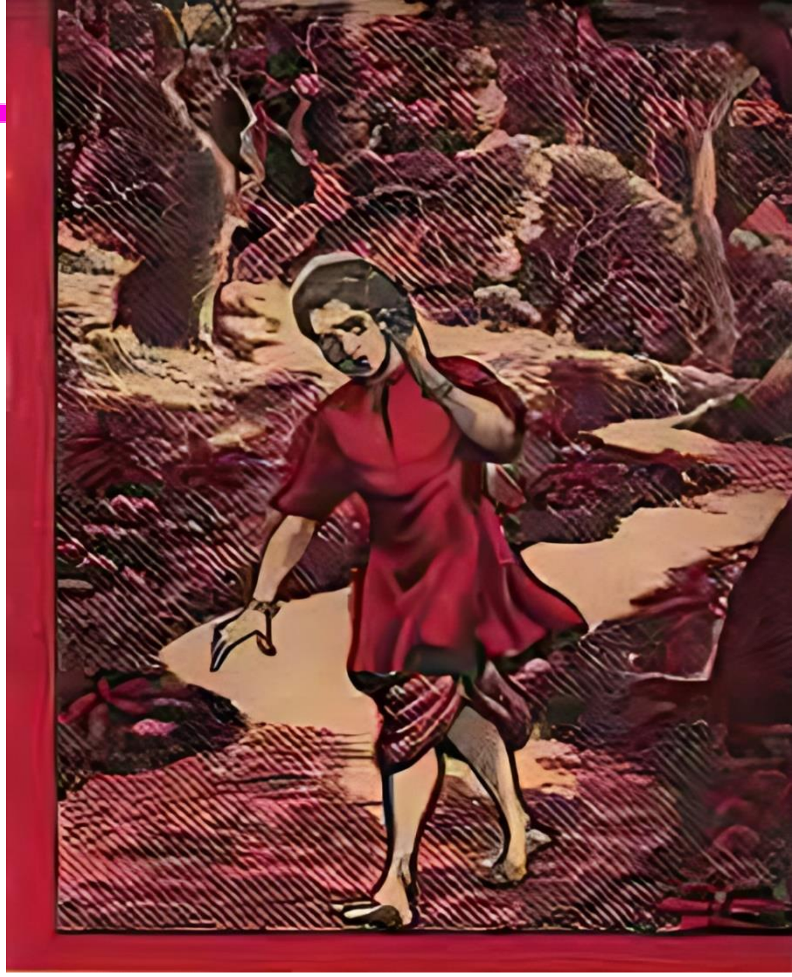
गाँव के पश्चिम में, कुछ दूर जाने पर एक जङ्गल पड़ता था। उसके बाद झाड़-झँखाड़ आते थे। पहाड़ की पश्चिम की आर राजधानी थी।

कुणाल जब जङ्गल में पहुँचा तो दुपहर हो गई थी। जङ्गल में छाँह थी। वह गाता गाता, उछलता कूदता जङ्गल में घुसा।

उसी समय एक गम्भीर आवाज़ आई:"कुणाल! जङ्गल में मत घुसो। तुम क़त्ल कर सकते हो।" वह यह न जान सका कि यह शब्द कहाँ से आया था और कितनी दूर से आया था। पहले यह सोचकर कि उससे कोई मजाक कर रहा था, उसने पेड़ के पीछे देखा। वहाँ उसे कोई नहीं दिखाई दिया।

वह आगे जाना चाहता था, इसलिए उसने उस आवाज़ की परवाह न की। वह जङ्गल में घुस कर, पेड़ों की छाँह में चलने लगा। वह नरम स्वभाव का था।

कहीं वह किसी को क़त्ल न कर बैठे, वह इस सोच-विचार में पड़ गया। वह इधर उधर देखता जा रहा था। परन्तु जङ्गल में उसे कोई न दिखाई दिया। कोई घटना नहीं घटी और वह जङ्गल के पार चला गया।



तब भी धूप काफी तेज थी। बिना किसी बजह के डरने के कारण, कुणाल मन ही मन हँसा और जङ्गल के आखिर पेड़ के नीचे कुछ देर सोया। मुँह पर धूप पड़ने पर वह उठा। झाड़-झंखाड़ों को पार कर, पहाड़ पर चढ़ना और उतरना था। इसलिये वह जङ्गल से आगे बढ़ा।

फिर पहले की तरह मावाज़ आई- "कुणाल। आगे मत जाओ; तुम्हारे कारण देश पर विपत्ति आ सकती है।"

"तुम कौन हो? इस तरह मुझे क्यों डरा रहे हो? मुझे तुम्हारी बात पर



विश्वास नहीं है। जङ्गल में घुसते ही तुमने कहा कि मैं किसी को क़त्ल कर दूँगा। पर मैंने किसी को क़त्ल नहीं किया।" कुणाल ने कहा।

"क़त्ल किया है, तुम्हारे पैरों के नीचे कुचलकर एक कीड़ा मर गया है।" उस आवाज़ ने कहा।

"तो मैं क्या कर सकता हूँ? ऐसी गलती हर कोई करता है। इन झाड़ों के पास आने के कारण देश पर बिपत्ति आयेगी, यह सरासर सफेद झूठ है।" कहते हुए कुणाल आगे बढ़ गया।

जब वह पहाड़ के पास गया तो अन्धेरा शुरू हो गया था। पर वह जानता था कि पहाड़ के परली तरफ अभी थोड़ी देर और रोशनी रहेगी। इसलिये वह पहाड़ पर चढ़ने लगा। फिर वही आवाज सुनाई दी- "कुणाल! पहाड़ पर मत चढ़ो। मर सकते हो।"

कुणाल खौल उठा। "मुझे क्यों इस तरह डरा रहे हो? तुमने क्या मुझे मजाक समझ रखा है? झाड़-झंखाड़ पार कर गया। पर क्या देश पर कोई आपत्ति आई?" वह चिल्लाया।

"हाँ! तुमने झाड़-झंखाड़ों को पार करते समय कई तितलियों को उड़ा दिया। उसमें से एक तो बहुत ही डर गई। वह राजधानी में जाकर वहाँ एक पेड़ पर अण्डे देगी। उनमें से निकलनेवाले कीड़ों में से एक गर्भवती रानी के पास महल में आएगा। उसको देख कर रानी चिल्लाकर गिर जायेगी। उसका गर्भ भी गिर जायेगा। राजा के फिर सन्तान न होगी। इसलिये राजा का भाई राजा बनेगा। वह बड़ा दुष्ट है। उसके कारण राज्य में अराजकता फैलेगी। और आखिर वह राज्य को

शत्रुओं के हाथ में सौंप देगा। और इस सब का कारण तुम ही हो।"

"हर कार्य का कोई न कोई परिणाम होता है न? कभी गुज़रनेवाली घटना का मैं कैसे जिम्मेवार ठहराया जा सकता हूँ? यह मैं न मानूँगा।" कहता हुआ कुणाल पहाड़ पर चढ़ने लगा। जब वह पहाड़ की चोटी पर पहुँचा तो सूर्य डूब रहा था।

कुणाल ने खुश होकर, गर्व के साथ कहा-"अब क्या कहते हो? मैं पहाड़ पर चढ़ गया हूँ; पर अभी जिन्दा हूँ। तुम्हारी बातें झूठ हैं।"

"अरे पागल! तुम से झूठ कहने की मुझे क्या पड़ी है? जब पहाड़ पर चढ़े हो तो उतरोगे ही। तुम ज़िन्दा किसी को न देख सकोगे और तुम्हें कोई जिन्दा न देख सकेगा। समझे?" उस आवाज ने कहा।

कुणाल डर गया। अँधेरे में उसके लिए पहाड़ से उतरना मुश्किल हो गया। कुछ देर उसने सोचा कि सवेरा होने तक वहाँ ठहरना ही अच्छा था। फिर उसने सोचा कि डरना बेकार था। क्योंकि अगर वह आकाश वाणी ही है तो भविष्य के



बारे में जानकर ही सावधान करेगी। उस हालत में वह मरेगा ही। और जब मरना हो तो सवेरे तक उसकी प्रतीक्षा करने की कोई जरूरत नहीं है। अगर आकाशवाणी बिना भविष्य के ज्ञान के होती तो उसके पालन करने की जरूरत ही नहीं है।

यह सोच कुणाल आगे बढ़ा। पर एक जगह अँधेरे में उसका पैर फिसल गया। और वह नीचे गिरकर मर गया। आकाशवाणी के अनुसार एक कौड़ा रानी के पास गया और वह मूर्छित हो गई। रानी का गर्भ भी गिर गया। राजा के सन्तान न हुई। राजा का भाई राजा बन गया। उसके

समय में राज्य में अराजकता फैली और फिर वह शत्रु के हाथ में चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजा ! मुझे एक सन्देह है। आकाश वाणी की बातों का पालन न करके कुणाल ने गलती की कि नहीं? उसको हत्या करने का पाप, राज्य को विपत्ति में डालने का पाप, आत्म हत्या का पाप लगेगा कि नहीं? तुमने इन प्रश्नों का जान-बूझकर जवाब न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"कुणाल ने गल्ती नहीं की। उसे कोई भी पाप न होगा। आकाश वाणी भविष्य को जान सकती है, पर उसको बदल नहीं सकती। अगर बदल सकती तो वह सावधान ही न करती, बल्कि भविष्य के बारे में बताती भी। अगर कुणाल को पहले मालूम होता कि उसके जङ्गल में जाने से एक कीड़ा मर जायेगा तो वह शायद जङ्गल में घुसता ही नहीं। वापिस चला जाता। परन्तु कुणाल के जङ्गल में घुसने से, झाड़-झाँखाड़ पार करने से, पहाड़ पर चढ़ने से रोकने की शक्ति उस आकाश वाणी में न थी। यह बात साफ़ है।

आखिर कुणाल मनुष्य ही तो था। इसलिए वह राह में कीड़े को बिना मारे रह सकता था, या राज्य को विपत्ति में डाले बगैर रह सकता था, या स्वयं मरे और रह सकता था, यह कौन कह सकता है? आकाश वाणी की तरह वह भविष्य भी न जानता था। इसलिए कुणाल सर्वथा निर्दोषी है।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन-भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ फिर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





[४]

[भुवन सुन्दरी को वापिस ले जाने के उद्देश्य से प्रताप ने ग्रीक राजाओं को एकत्रित किया। वह ट्रोय पर हमला करने के लिए निकला। पर कामयाबी हासिल न हुई। वे ट्रोय पहुँचने के बदले मिसिया पहुँचे। फिर वहाँ से ट्रोय के लिए रवाना हुए तो समुद्र में बड़ा तूफ़ान चला। आखिर उन्हें ग्रीस लौटना पड़ा। एक साल बाद प्रताप ने ट्रोय पर धावा बोल दिया....]

अगर ग्रीक नौकाओं से उतरनेवालों में चन्द्रप्रभु पहला था तो वज्रकाय दूसरा। उसके बाद ग्रीक सेनायें जहाज़ों से जल्दी जल्दी उतरकर बड़े उत्साह से युद्ध करने लग गयीं।

ट्रोजनों में, मराल नाम का एक वीर था। उसे तलवार या भाले से नहीं मारा जा सकता था। इसी मराल ने पहले दिन युद्ध में कई ग्रीक सैनिकों को यम के पास मेज दिया था। वज्रकाय मराल का मुकाबला करने लगा। बहुत देर युद्ध चला, पर मराल न झुका। आख़िर, जब मराल पत्थर से टकरा कर ज़मीन पर गिर गया तो वज्रकाय यह मौका पाकर उसकी छाती पर जा कूदा और उसका गला घोंट कर उसने उसे मार दिया।

मराल के मरते ही ट्रोजन सेनायें तितर बितर हो गई, और ट्रोय नगर की ओर भाग गईं। वे निरुत्साह और निराश हो गये। तब ग्रीकों ने अपने जहाजों

को एक सुरक्षित स्थान पर रख, ट्रोय नगर की चार दीवारी के बाहर घेरा डाल दिया। यह घेरा दस वर्ष तक जारी रहा, नौ वर्षों में, दोनों पक्षों में कोई खास युद्ध न हुआ, पर कई विशेष घटनाएँ घटीं।

ट्रोय नगर के राजा वर्धन की दो पत्नियों थीं। मोहन की माँ, उसकी दूसरी पत्नी थी। उसके पचास लड़कों में, १९ लड़के उसी के थे। उन सब में बड़ा वीरसिंह था। उसके एक और लड़के का नाम था इलियु। जब इलियु का जन्म हुआ था तो उसके बारे में ज्योतिषियों ने कहा था कि अगर वह बीस वर्ष का हो गया तो कोई भी ट्रोय नगर को न जीत सकेगा।

इसलिये जैसे भी हो, वज्रकाय इलियु का काम तमाम करने की फ़िक्र में था। एक दिन, मन्दिर के प्राङ्गण में इलियु अपने नौकरों से घोड़ों को कवायत करवा रहा था। वज्रकाय अचानक वहाँ गया, और इलियु को देखकर उसने उसको भाले से मार दिया। उसकी मृत्यु पर सारे ट्रॉय नगर वासी बहुत दुःखी हुए।

वर्धन के लड़कों में वृकाक्ष नाम का एक और लड़का था। जब वह बाग में, रथ



बनाने के लिए लकड़ी काट रहा था रात में, छुपा छुपा वज्रकाय उस बाग में गया। उसको पकड़कर, अपनी सेना के पास ले गया। उस कैदी को ग्रीक सरदारों ने, ग्रीक सेना को शराब बेचने वाले एक राजा को गुलाम के रूप में बेच दिया। उस राजा के किसी कर्मचारी ने वृकाक्ष की हालत पर तरस खायी और राजा को काफ़ी धन देकर उसे स्वतन्त्र कर दिया। जब वह खुशी खुशी तरह तरह की कल्पनाएँ करता हुआ ट्रोय नगर वापस जा रहा था तो वज्रकाय ने उसको रास्ते में देखकर उसे मार दिया।

वज्रकाय ने इस तरह के और भी कई कारनामे किये। युद्ध नहीं था, इसलिये ग्रीक सैनिकों को कुछ काम काज भी न था। जो जी में आता था करते थे। वज्रकाय सैनिकों की एक टोली लेकर ट्रोय नगर के आसपास के प्रदेश का निरीक्षण करने लगा। जब वे घूमते-घामते, हँसते-हँसाते इड़ा पर्वत पर पहुँचे तो उन्हें प्रशंस नाम का एक व्यक्ति दिखाई दिया।

यह प्रशंस मोहन का सम्बन्धी था। मोहन जब भुवन सुन्दरी को लाने के लिये गया था तब वह भी उसके साथ गया था।





उसने उसकी कई प्रकार से सहायता की थी तो भी, भुवन सुन्दरी को लेकर ग्रीक और ट्रोजनों में जो युद्ध हो रहा था, उसमें वह तटस्थ ही रह गया था। उसने ऐसा करने में ही अपनी भलाई समझी। उसकी सेना ने भी युद्ध में हिस्सा न लिया।

प्रशंस, जब अपने पशु-पालकों के साथ इड़ा पर्वत पर था, तब वज्रकाय और उसके सैनिक वहाँ आये और उन पर हमला करने लगे। वज्रकाय के हमले का मुकाबला प्रशंस न कर सका और वह पहाड़ से उतरकर चला गया। ग्रीकों ने बड़ी मनमानी की, और पशु-पालकों को मारकर उनके पशुओं को ले लिया।

इस घटना के बाद, प्रशंस तटस्थ न रह सका। तुरन्त वह अपनी सेनाओं को ट्रोय नगर ले गया और युद्ध में शामिल हो गया। प्रशंस बड़ा बहादुर योद्धा था। वज्रकाय भी जो किसी की परवाह न करता था, उसके बारे में कभी बेअदबी से नहीं बात करता था। ट्रोजन सैनिकों के बारे में तो कहने की ही जरूरत नहीं। वे जितना वीरसिंह का आदर करते थे, उतना ही प्रशंस का भी आदर करते। वह युद्ध में बड़ी बहादुरी दिखाता। कई बार घायल हुआ, पर जिन्दा ही रहा।

इस युद्ध में प्रशंस की मृत्यु नहीं बदी थी। उसके बारे में यह कहा गया था, कि उसके वंश वाले, भविष्य में, ट्रोय नगर के राजा होंगे।

ट्रोय नगर से मैत्री रखनेवाले कई और नगर भी थे। उनमें से कई को वज्रकाय ने हरा दिया था और अपने कब्जे में भी कर लिया था। उनमें से एक राजा वह भी था, जिसने अपनी पुत्री का विवाह, वीरसिंह के साथ किया था। ग्रीक लोगों

के साथ युद्ध करते हुए, यह राजा और उसके सात पुत्र मारे गये।

ग्रीक लोगों के शिविर में कई बातें हुई। उनमें से एक यह थी:

एक दिन राजा ने रूपधर को बुलाकर आज्ञा दी-"तुम त्रेस जाकर, वहाँ से जहाजों में रसद लाओ।" रूपधर उसकी आज्ञा के अनुसार गया तो सही, पर अपने काम में उसे सफलता नहीं मिली। वह खाली हाथ वापिस चला आया।



ग्रीक वीरों में प्रबोध नाम का एक बड़ा योद्धा था। उसने एक दिन रूपधर से कहा-"तू निरा आलसी है। डरपोक है।"

"इसमें मेरी कोई गलती नहीं है। कहीं भी हमें रसद न मिली। अगर राजा तुझे भेजता तो तू भी खाली हाथ वापिस आता।" रूपधर ने कहा।

प्रबोध को जोश आ गया। वह तुरन्त एक जहाज लेकर निकल गया और थोड़े ही दिनों के अन्दर उसको रसद से भरकर वापिस ले आया। इस घटना से रूपधर का बुरी तरह अपमान हुआ। वह प्रबोध से बदला लेने की सोचने लगा। सोचते सोचते उसे एक चाल सूझी।

एक दिन, रूपधर ने राजा के पास यह खबर भेजी :

रात को मुझे सपने में देवता दिखाई दिये। उन्होंने कहा कि एक आपत्ति आनेवाली है। ग्रीक सेना के एक दिन और रात कहीं और पड़ाव डालने से आपत्ति हट सकती है।"

रूपघर की खबर पर राजा ने तुरत कार्यवाही की। ग्रीक सेना अपने शिविर को छोड़कर, एक दिन और एक रात के लिए किसी और जगह चली गई। शिविर खाली होने पर रूपधर चुपचाप प्रबोध के तम्बू



में जाकर, एक सोने के सिक्कों की थैली रख आया। फिर उसने एक युद्ध के क़ैदी को डरा-धमका कर उससे एक चिट्ठी लिखवाई। वह पत्र इस तरह लिखा गया था कि मानों वर्धन ने प्रबोध को लिखा हो। "ग्रीकों को धोखा देने के लिए तेरी इच्छा के अनुसार, सोना मेजा जा रहा है।" उस पत्र में लिखा था।

"तुम इस पत्र को लेकर तुरन्त प्रबोध के पास पहुँचाओ।" रूपधर ने कैदी को आज्ञा दी। वह क़ैदी रूपधर के कहे अनुसार जब उस चिट्ठी को प्रबोध के पास ले जा रहा था तो रास्ते में अचानक रूपधर के आदमियों ने उसे घेरकर मार दिया।

जब ग्रीक अगले दिन अपने शिविर में आये तो उन्हें बाहर मरा हुआ कैदी दिखाई दिया। उसके पास से एक पत्र मिला। क्योंकि वह एक खतरनाक पत्र था इसलिए उसको राजा के पास भेजा गया। राजा ने उस चिट्ठी को पढ़कर, प्रबोध को बुलवाया। उससे पूछा गया कि वर्धन के पास से इस प्रकार की चिट्ठी कैसे आयी थी। प्रबोध को इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा कि मैं देशद्रोही नहीं हूँ, न कभी मुझे बर्धन ने रुपया दिया था, न किसी और ने।

"उसके तम्बू की तलाशी करने पर सच मालूम हो जायेगा।" रूपधर ने कहा।

तम्बू की तलाशी ली गई। सोना बरामद हुआ। प्रबोध देशद्रोही साबित हुआ। देशद्रोही के लिए दण्ड यही था कि सैनिक उस पर पत्थर फेंक फेंककर उसे मार दें। प्रबोध को ग्रीक सैनिकों ने पत्थरों से मार दिया। मरते समय उसने कहा- "अरे सत्य, क्या तू मेरे देखते देखते ही मर गया है?"



प्रबोध की हत्या हर तरह से निन्दनीय थी। वह निर्दोषी ही नहीं, बहुत प्रतिभाशाली और बहादुर भी था। ट्रोय नगर का घेरा डाले हुए, ग्रीक सेनाओं का मन बहलाने के लिए उसने शतरञ्ज खेल का आविष्कार किया। उसने कई ऐसी चीजें बनाई। उसने प्रकाशस्तम्भ बनाये। तराजू और बट्टे बनाये। लिपि का उसने आविष्कार किया। पहरा आदि के प्रबन्ध का विधान उसने तैयार किया। ग्रीक लोगों पर उसका कई तरह का एहसान था।

ग्रीस देश में रहनेवाले प्रबोध के पिता को, उसके पुत्र की हत्या का समाचार पहुँचा। वह बड़ा दुःखी हुआ और तुरन्त ट्रोय नगर के लिए निकला। राजा के पास जाकर उसने बड़े निर्भीक होकर साफ़ साफ़ पूछा-"मेरे पुत्र की किस कारण से हत्या की गई है? किस प्रकार सिद्ध किया गया कि वह द्रोही था?"

राजा ने उसको जवाब देने से इनकार कर दिया। राजा को शायद मालूम था कि प्रबोध निष्कारण मारा गया था। रूपधर ने उसके विरुद्ध साजिश की थी। तो भी क्योंकि रूपधर पर उसको भरोसा था। इसलिए उसने प्रबोध के पिता की शिकायत को ठुकरा दिया।

जिस काम पर वह गया था, वह पूरा न हुआ। इसलिए प्रबोध का पिता वापिस ग्रीस चला गया। उसने कुछ ग्रीक सैनिकों की स्त्रियों से कहा- "तुम्हारा पति ट्रोय नगर की स्त्रियों से विवाह करके उनको साथ ला रहे हैं। अब उन्हीं की चलेगी...." वह झूठमूठ कहने लगा। यह सुन कई ग्रीक स्त्रियों ने आत्म-हत्या कर ली।

(अभी और है)





बहुत दिन पहले किसी गाँव में सङ्गमलाल और दयावती नाम के गरीब पति-पत्नी रहा करते थे। उनके बाल बच्चे न थे। दोनों बूढ़े हो रहे थे। सङ्गमलाल शुरू से ही बड़ा गुसैल था। और जैसे जैसे उसकी उम्र बढ़ती गई उसका गुस्सा भी बढ़ता गया। छोटी-छोटी बात पर नाक भौं चढ़ाता। पत्नी को पीट बैठता। यह उसकी रोज़मर्रे की आदत हो गई थी।

दयावती को बच्चे न होने की बड़ी फिक्र थी। तिस पर पति का डाँटना-डपटना, गुस्सा करना देखकर वह और भी तङ्ग थी। उसने सोचा-"अगर इस बूढ़े को कभी चोट का स्वाद चखाया गया तो अच्छा होगा।" वह ठीक मौके की प्रतीक्षा करने लगी।

फिर एक दिन मौका भी आया, पर समय और भाग्य ने दयावती का साथ न दिया। सवेरे उठते ही, दयावती को दो तीन लातें जमाकर उसका पति जङ्गल में मज़े से चला गया। रोज कन्धे पर कुल्हाड़ी रख, जङ्गल में लकड़ियाँ काटकर लाना ही उसका काम था।

उस दिन वह पत्नी को मार कर उधर गया ही था कि इधर जमीन्दार के नौकर आ धमके। उन्होंने आते ही दयावती के घर के किवाड़ खटखटाकर जोर से पूछा-"कौन है अन्दर?"

उन दिनों जमीन्दारों का रौब कुछ ऐसा ही होता था। खैर, दयावती ने किवाड़ खोल दिये। जमीन्दार के नौकरों ने उसकी ओर घूरते हुए पूछा-"इस गाँव में कोई देसी दवा-दारू करनेवाला बैद्य है?"

यह प्रश्न सुनते ही दयावती बड़ी खुश हुई। उसने मन में तीन करोड़ देवी-

श्री अमृतलाल नागर

देवताओं को दुहाई दी। फिर कहा- "देसी दवा-दारू करनेवाले हैं क्यों नहीं? एक आदमी है, वह और कोई नहीं, मेरा ही आदमी है। अच्छा तो खैर, बीमार कौन है?" दयावती ने पूछा।

ज़मीन्दार के नौकरों ने सारी बात बता दी। जमीन्दार की लड़की दीवार थी। बड़े बड़े बैद्य-हकीमों ने आकर अच्छी अच्छी दवाइयाँ दीं, पर बीमारी काबू में न आई। इसलिए वे देसी वैद्यों की खोज में निकले थे।

"मेरे पति चाहे कितनी भी बड़ी बीमारी हो दवा-दारू करके चुटकी भर में ठीक कर देते हैं। देखिये, कल या परसों मुकन्दलाल का लड़का मन्दिर से गिर पड़ा, उसका पैर टूट गया। इन्होंने जाकर किसी तेल से उसके पैर की मालिश की। आपको खुद वह नज़ारा देखना चाहिये था। मालिश करते ही वह लड़का फिर भागा भागा मन्दिर पर चढ़ गया।" दयावती ने कहा।

उसकी बात सुनकर ज़मीन्दार के नौकर बड़े खुश हुए कि आख़िर उनकी बहुत देर की खोज सफल हो गई थी।



"वह कहाँ है? कहाँ है वह?" वे जल्दी जल्दी पूछने लगे।

वह लकड़ियाँ काटने जङ्गल में गया हुआ है।" दयावती ने कहा।

"इतना बड़ा वैध है और खुद लकड़ियाँ काटता है? अचरज की बात है।" जमीन्दार के नौकरों ने कहा।

"आप अचरज की बात कह रहे हैं? नहीं, यह गजब की बात है।" सिर और हाथ हिलाते हुए दयावती ने कहा-"वह और वैद्यों की तरह नहीं है। कई बार एकदम किसान की तरह कपड़े

पहनता है। मौका मिले तो रोगियों के पास से बिना कुछ कहे सुने खिसक भी जाता है। और तो और आजकल तो यह भी इधर उधर कहने लगा है कि उसे वैद्यक ही आती जाती नहीं है। जमीन्दार साहब की लड़की की किस्मत है। अगर आपने डण्डे को थोड़ा बहुत काम सौंपा, तो वह जरूर इलाज करने के लिये मान जाएगा।"

दयावती की बात सुनकर जमीन्दार के नौकर हँसे। उनमें से एक ने कहा-"तुम ठीक ही कह रही हो। हम भी तो दुनियाँ में देख रहे हैं। ये जितने भी अक्लमन्द हैं, उनमें अक्ल के साथ कोई न कोई खब्त भी होती है।"

फिर ज़मीन्दार के नौकरों ने जङ्गल में लकड़ी काटते हुए सङ्गमलाल को देखा। "तुम ही हो न सङ्गमलाल!" उन्होंने पूछा।

"हाँ हाँ, नहीं नहीं।" सङ्गमलाल ने इधर उधर ताकते हुए कहा- "जब तक आप यह न बतायेंगे कि काम क्या है, तब तक आप न जान पायेंगे कि यह कौन है।" सङ्गमलाल ने उनको सन्देह की दृष्टि से देखते हुए कहा। तब जमीन्दार के नौकरों ने कहा-



"हम आपकी प्रसिद्धि से परिचित हैं, आपसे थोड़ा काम आ पड़ा है।"

"तब ठीक है! जो कुछ आपने मेरी प्रसिद्ध के बारे में सुना है, वह भी ठीक है। बड़े बड़े पेड़ों को काट गिराने में मैं सचमुच बड़ा माहिर हूँ।" सङ्गमलाल ने कहा।

"आप इतने बड़े वैद्य हैं, आपके मुख से ये बातें अच्छी नहीं मालूम होती।" ज़मीन्दार के नौकरों ने कहा।

सङ्गमलाल ने सोचा कि शायद वे कोई पागल हैं। उसने कहा-"वैद्य क्या? मैंने तो कभी कोई इलाज वगैरह नहीं किया है।"

ज़मीन्दार के नौकर एक दूसरे की तरफ देखने लगे। उनको याद आया, इसकी पत्नी ने जो कहा था वह सच ही है। फिर क्या था, उनके मोटे मोटे डण्डे उसकी पीठ पर धड़ाधड़ पड़ने लगे। सङ्गमलाल रोने-धोने लगा कि वह वैद्य न था। वह शोर करता जाता था। शोर के साथ मार भी अधिक पड़ती जाती थी। बुरी हालत हो गई। आखिर लाचार हो सङ्गमलाल को मानना पड़ा कि वह वैद्य था।





नौकर सङ्गमलाल को सीधे जमीन्दार के पास ले गये। ज़मीन्दार ने सामने आकर उसकी अगवानी करते हुए कहा-"वैद्याचार्य! मैं आप ही की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। आइये। पधारिये।"

सङ्गमसाल को रोगी के कमरे में ले जाया गया। "आपकी तबीयत कैसी है?" सङ्गमलाल ने जमीन्दार की लड़की से पूछा। उस लड़की ने धीमे धीमे कुछ गुनगुना दिया।

"मुझे नहीं मालूम कि ये किस भाषा में बात कर रही हैं। मैं एक शब्द भी न समझ पाया हूँ।" सङ्गमलाल ने आश्चर्य से कहा। तब ज़मीन्दार ने सनम्र कहा-"एक बार, यकायक लड़की का बोलना बन्द हो गया। तब विवाह का मुहूर्त भी निश्चय कर दिया था। मैं बड़ी आफत में फँसा। खैर, आपका क्या ख्याल है कि लड़की की बीमारी क्या है?"

"बीमारी क्या है ? बात न कर पाना ही बीमारी है।" सङ्गमलाल ने कहा।

"कृपया बता सकेंगे कि इस बीमारी का कारण क्या है?" जमीन्दार ने पूछा।

सङ्गमलाल ने सिर हिलाते हुए कहा-"कारण क्या है? बस जीभ ने अपना काम करना बन्द कर दिया है। इसके कारणों के बारे में वाल्मीकी ने बहुत कुछ लिखा है। वे बहुत बड़े आदमी हैं। वे एक इञ्च मुझ से बड़े हैं। क्या आप संस्कृत जानते हैं? ओहो नहीं जानते! इस व्याधि के बारे में संस्कृत के एक श्लोक में निचोड़कर सब कुछ बता दिया गया है। जीभ को हिलानेवाली कुछ नसें हमारे शरीर में होती हैं।" यह सब सङ्गमलाल ने एक ही साँस में कह डाला। उसने

शरीर शास्त्र के बारे में एक छोटा-मोटा व्याख्यान भी दे दिया।

ज़मीन्दार ने सब सुनकर पूछा-"मुझे एक सन्देह है। आपने शरीर शास्त्र के बारे में बहुत कुछ बताया है। वह ठीक ही है। आप यह कहते हैं कि मनुष्य का दिल दाहिनी तरफ होता है। यह बाई तरफ है न?"

सङ्गमलाल ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा-"हाँ पहिले जमाने में ऐसा ही होता था। आजकल सब बदल गया है। उल्टा हो गया है, उल्टा जमाना, उल्टी बातें।"

"अनजाने ही पूछ बैठा था। माफ़ कीजिये। मैं पुराने जमाने का आदमी हूँ। आजकल की बातें मालूम नहीं हैं।" जमीन्दार ने कहा।

तब सङ्गमलाल ने जमीन्दार की लड़की की नब्ज पकड़कर कहा-"बीमारी अभी शुरू ही हुई है। चावल को लस्सी में खूब मिलाकर खिलाइये। तुरन्त असर होगा। तोते भी तो यही खाते हैं। देखिये उनका स्वर कितना मधुर होता है!"

सङ्गमलाल पर ज़मीन्दार को विश्वास हो गया। बहुत मना करने पर भी



उसने उसको बहुत रुपया-पैसा दिया और यह भी प्रार्थना की कि समय मिलने पर फिर वह रोगी को देख जाये।

जब सङ्गमलाल घर पहुँचा तो बाहर उसे एक नौजवान खड़ा दिखाई दिया। "कौन हो तुम?" उसने नौजवान से पूछा। नौजवान ने कहा-"आप बहुत बड़े वैद्य हैं। यह जानकर मैं आपके पास आया हूँ। यह झूठ है कि जमीन्दार साहब की लड़की बात नहीं कर सकती। क्योंकि वह पिता द्वारा निश्चित व्यक्ति से विवाह नहीं करना चाहती थी,

इसलिए वह यह बहाना कर रही है। हम दोनों ने पहले ही निश्चय कर लिया था कि आपस में विवाह कर लेंगे।"

नौजवान की बात सुनकर सङ्गमलाल बड़ा खुश हुआ। चार दिन बाद उस नौजवान को साथ लेकर वह ज़मीन्दार के घर गया। जमीन्दार उन दोनों को अपनी लड़की के कमरे में लिवा ले गया।

सङ्गमलाल के साथ आये हुए नौजवान को देखकर जमीन्दार की लड़की उठ बैठी। तब उसने कहा कि पिताजी द्वारा निश्चित विवाह वह नहीं करेगी। कुएँ में डूब मरेगी। लड़की के यह कहते ही ज़मीन्दार को बड़ा गुस्सा आया।

"वैद्य जी! फिर कोई ऐसी दवा दीजिये, जिससे कि लड़की बात न कर सके। मैं यह बकवास सुन नहीं सकता। कान फूटे जा रहे हैं।" जमीन्दार ने गिड़गिड़ाते हुए कहा। यह सुन सङ्गमलाल ने कहा-"मैं कोई ऐसी दवा नहीं दे सकता, जिससे कि आपकी लड़की फिर बोलना बन्द कर दे। अगर आप चाहें तो मैं ऐसी दवा जरूर दे सकता हूँ ताकि आप बहरे हो जायें।"

जमीन्दार हक-बक्का रह गया। करता तो क्या करता! वह अपनी लड़की का विवाह उस व्यक्ति से करने को मान गया, जिसे वह चाहती थी।

सङ्गमलाल घर पहुँचा। पत्नी से उसने अपने इलाज़ और उसके लिये मिले रुपये-पैसे के बारे में कहा। पहले तो दयावती को यह सोच अफसोस हुआ कि उसकी चाल चल न पाई थी। पर फिर अपने पति की अक्लमन्दी की तारीफ़ करने लगी। सङ्गमलाल ने भी उस दिन से पत्नी को मारना पीटना छोड़ दिया।



CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1957 Regd. No. M. 8452



भुवन - सुन्दरी